42

वर्ष 41, अंक 03, सितम्बर 2005, मूल्य 05.50

ज्ञानामृत

मासिक

1. नई देहली- भारत के राष्ट्रपति महामहिम भ्राता अब्दुल कलाम जी को राखी बाँधती हुईं ब्र.कु. आशा बहन । साथ में हैं ब्र.कु. मंजू बहन, ब्र.कु. सुरेन्द्र जी तथा अन्य। 2. नई देहली- भारत के प्रधानमंत्री भ्राता मनमोहन सिंह जी को राखी बाँधती हुईं ब्र.कु. मंजू बहन। साथ में हैं ब्र.कु. आशा बहन तथा अन्य ।

1. काठमाण्डु- नेपाल के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भ्राता दिलीप कुमार पौडेल को आत्म-स्मृति का तिलक देती हुईं ब्र.कु. राज बहन । **2. कुप्पम-** आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय की मुख्य न्यायाधीश बहन मीना कुमारी को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. सरोजिनी बहन तथा ब्र.कु. मंजुला बहन । **3. चण्डीगढ़-** पंजाब के राज्यपाल महामहिम जनरल (सेवा निवृत्त) भ्राता रोड्रिग्स को राखी बाँधती हुईं ब्र.कु. अचल बहन । **4. देहली (चाँदनी चौक)-** भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भ्राता बी.एन. श्री कृष्ण को राखी बाँधने के बाद ब्र.कु. विमला बहन, ब्र.कु. जयप्रकाश भाई उनके साथ । **5. देहली (पाण्डव भवन)-** उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भ्राता धर्माधिकारी सपत्नीक राजयोगिनी दादी हृदयमोहिनी जी से ज्ञान-चर्चा करते हुए । **6. सोनीपत (विश्व कल्याण सरोवर)-** विधायक रमेश कौशिक को राखी बाँधती हुईं दादी हृदयमोहिनी जी । **7. मुम्बई (कोलाबा)-** महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री भ्राता विलासराव देशमुख को राखी बाँधने के पश्चात् ईश्वरीय संदेश देती हुईं ब्र.कु. गायत्री बहन तथा ब्र.कु. मोहिनी बहन । **8. नवांशहर-** पंजाब के मुख्यमंत्री भ्राता अमरेन्द्र सिंह को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. कान्ता बहन ।

– संजय की कलम से

योग में मन को कहाँ टिकायें?

योगाभिलाषी प्रश्न किया करते हैं कि योगाभ्यास के लिए मन को कहाँ टिकायें? वे कहते हैं कि मन को एकाग्र करने के लिए कोई तो आधार चाहिए। चूँकि प्राय: लोग परमपिता परमात्मा को रूप-रहित (Formless) और अनन्त मानते हैं अत: वे एकाग्रता के अभ्यास के लिए परमात्मा रूपी सही आधार को छोड़कर या तो किसी देवता की आकृति पर प्रत्याहार, धारणा और ध्यान का अभ्यास करते हैं या अन्य कोई साधन अपना लेते हैं। वे अनेक देवताओं, देवियों, अर्हतों या धर्म-स्थापकों में से किसी एक को अपना इष्ट मान कर उनका ध्यान करते हैं।

परन्तु हमें इस सत्यता का ज्ञान तो होना ही चाहिए कि परमात्मा देवों का भी देव है। अत: किसी देवता या देवी को परमात्मा मानना योग का सही आधार नहीं है। **परमात्मा** तो एक **आत्मा** है जो कि अन्य सभी आत्माओं से गुणों और कर्त्तव्यों के दृष्टिकोण से **'परम'** अथवा सर्व-महान् है; उस पर पुरुष-जैसी या स्त्री-जैसी देह-आकृति आरोपित करना भूल है। देवी का रूप माता-जैसा और देवता का रूप पिता-जैसा होता है परन्तु परमात्मा तो 'माता' और 'पिता' दोनों हैं और उसकी तो कोई दैहिक आकृति है ही नहीं; वह तो सूक्ष्मातिसूक्ष्म है और आत्माओं के समान ज्योतिस्वरूप है। परमात्मा घेरे की दृष्टि से नहीं बल्कि काल की दृष्टि से अनन्त है; उसमें ज्ञान, शान्ति और प्रेम अनन्त है और उसके इस दिव्य बिन्दु रूप का अन्त (नाश) नहीं हो सकता इसलिए वह अनन्त है। उस ममता-भरे ज्योति-बिन्दु पर मन को स्थिर कर प्रभु-प्रेम से प्लावित हो जाना ही योग है!

एक बात और है। जब कोई श्री कृष्ण या श्री रामादि देवताओं पर भी मन को एकाग्र करने का यत्न करता है तो वह एक क्षणांश में उस सारी आकृति पर नहीं बल्कि एक ही शरीर-भाग पर मन टिका सकता है। यही कारण है कि प्राय: भक्तजन पहले चरणों का ध्यान करते हैं और धीरे-धीरे मन रूपी चक्षु द्वारा अपने इष्ट के वक्ष-स्थल, हस्त, मुख-मण्डल आदि को निहारते हैं, अत: इस प्रकार के आधार से तो वैसे ही किसी एक केन्द्र-बिन्दु पर मन को स्थिर किये रहना सम्भव नहीं और, दूसरे, ये शरीर तो प्रकृतिकृत हैं, ये तो आत्मा के स्थूल या सूक्ष्म वस्त्र हैं जबकि मन को तो प्रकृति पर

शेष पृष्ठ......07 पर

अमृत-सूची

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	65/-	1,000-
वर्ल्ड रिन्युअल	65/-	1,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	600/-	6,000-
वर्ल्ड रिन्युअल	600/-	6,000/-

शुल्क केवल **'ज्ञानामृत'** अथवा **'द वर्ल्ड रिन्युअल'** के नाम से ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है–सम्पादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन – 307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

– शुल्क के लिए सम्पर्क करें–

09414423949, 09414154383

सम्पादकीय ....

शरीरं आद्यं खलु धर्म साधनम्

कुछ दिन पूर्व, शान्तिवन से लगभग 3-4 किलोमीटर की दूरी पर एक घातक दुर्घटना में दो युवकों ने प्राण त्याग दिए। स्थानीय समाज सेवियों ने तुरन्त नेत्र-बैंक को सूचना दी और डाक्टरों के सहयोग से, किसी अन्य की अन्धेरी दुनिया को रोशन करने के लिए उन नेत्रों को सुरक्षित रख लिया गया। विज्ञान के सहयोग से जबसे अंग-दान की अथवा अंग प्रत्यारोपण की यह प्रक्रिया सम्भव हो पाई है, तब से यह प्रचलित मान्यता कि मानव शरीर मृत्योपरान्त किसी काम नहीं आता, किसी सीमा तक परिवर्तित हो गई है। अब तो वैज्ञानिक अनुसन्धानों के लिए भी, अपने मृत शरीर के दान का प्रावधान कई लोग जीते जी ही कर जाते हैं।

श्रेष्ठ विचारों का प्रशिक्षण ज़रूरी

अंग प्रत्यारोपण की इस प्रक्रिया से कई महत्त्वपूर्ण विचारबिन्दु मन में उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति बड़ी क्रूर प्रकृति का है, उसकी आंखों में सदा खून उतरा रहता है और हर व्यक्ति उससे भयाक्रान्त भी रहता है। जीवन के अन्तिम क्षणों में वह नेत्र-दान की घोषणा करता है और उसकी मृत्यु के बाद, किसी बाल ब्रह्मचारी और जन्मान्ध सन्त को प्रत्यारोपित होकर उसकी वे आंखें उसे जहान को देखने में समर्थ बना देती हैं। अब उन्हीं आंखों से करुणा टपकने लगती है, अनेक लोग उन्हीं नज़रों से निहाल होने लगते हैं और अनेक उन से दुआ और दया का रसास्वादन करके धन्य-धन्य महसूस करने लगते हैं। यह इतना परिवर्तन कैसे हो गया ?

इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि आंखें अपने आप में यन्त्र हैं, जड़ हैं, देखने के साधन अथवा माध्यम मात्र हैं परन्तु इन आँखों की मालिक अथवा इनके द्वारा देखने वाली सत्ता चैतन्य आत्मा है। उस आत्मा का जैसा भाव, जैसी वृत्ति, जैसा विचार होता है, वैसा ही इन आंखों से प्रकट होता है। यह केवल आँखों की बात नहीं है, शरीर की हर कर्मेन्द्री पर यह सिद्धांत लागू होता है। शरीर का हर अंग, सभी ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ आत्मा रूपी मालिक के लिए साधन और यन्त्र हैं। संस्कृत में कहावत है, 'शरीरम् आद्यम् खलु धर्म साधनम्' अर्थात् शरीर आत्मा के लिए धर्म का प्रथम साधन है। शरीर का हर अंग, आत्मा के विचारों के आधार पर दो धारी तलवार जैसा सिद्ध होता है। आत्मा के विचार श्रेष्ठ होने पर वही हाथ मल्हम-पट्टी,दान, दुआ में मशगूल हो सकते हैं और भ्रष्ट विचार होने पर वही हाथ बन्दूक तानने, चोरी करने तथा छीना-झपटी और धक्का-मुक्की का आसुरी कुकर्म भी कर सकते हैं। अत: हाथ काटने की, आंखें निकालने की, मुख को पट्टी बांधने की आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता है आत्मा को श्रेष्ठ विचार उत्पन्न करने का प्रशिक्षण देने की।

संसार में हज़ारों प्रकार के प्रशिक्षण होने पर भी , इस प्रशिक्षण का सर्वथा अभाव है और उसका परिणाम आए दिन मानवता भुगत रही है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय पिछले 69 वर्षों से इसी प्रशिक्षण के लिए जन-जन का आह्वान करता आ रहा है। जिस प्रकार दही को बिलोने से मक्खन अपने आप ऊपर आ जाता है उसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान और राजयोग का अभ्यास करने से, मन में इनको बिलोने से महान विचार, पावन विचार, उच्च विचार, सकारात्मक विचार रूपी माखन स्वत: प्राप्त होता है। इसलिए कहा जाता है कि दही को बिलोने से नवनीत और देही(आत्मा) को बिलोने से नवनीति निकलती है।

आत्मा निर्लेप नहीं है

अंग्रेज़ी में कहा जाता है – I Think therefore I am (मैं हूँ

इस बात का प्रमाण यह है कि मैं सोचती हूँ). I see therefore I am,I here therefore I am अर्थात् मैं देखती हूँ, मैं सुनती हूँ, इसलिए मैं हूँ , ऐसा नहीं कहा गया है। क्योंकि मैं हूँ , इसका प्रमाण मेरा देखना या सुनना नहीं है पर मेरा विचार करना है। देखने, सुनने की शक्ति के न रहने पर भी मैं रह सकती हूँ पर विचार शक्ति के न रहने पर मैं नहीं रह सकती क्योंकि मैं विचार ही तो हूँ। विचारों का उद्गम हूँ, विचारों का पुन्ज हूँ। मेरे घटक (Ingredients) मेरे विचार ही हैं। ये विचार ही आँख, मुख, हाथ की मुद्राओं से प्रकट होते हैं। विचार सूक्ष्म हैं, इन्द्रियों के माध्यम से उनका स्थूल प्रकटीकरण होता है। किसी भी वस्तु के घटक यदि गन्दे हों तो चीज़ उजली कैसे हो सकती है ? वह भी गन्दी और बदबूदार हो जाती है। इसी प्रकार, आत्मा के घटक अर्थात् विचार जब गन्दे हो जाते हैं तो आत्मा भी तमोप्रधान, काली,पतित हो जाती है। उस कालिमा को हटाना ही आध्यात्मिक पुरुषार्थ अथवा आध्यात्मिक स्वास्थ्य लाभ कहलाता है।

किसी सुन्दर मकान को देखकर एक व्यक्ति सोचता है कि इसका मालिक बहुत भाग्यशाली है जो उसे पूर्वजों द्वारा इतना सुन्दर मकान वर्से में मिला है। दूसरा व्यक्ति सोचता है कि इसके मालिक ने अवश्य ही व्यवसाय या नौकरी में बेईमानी से धन कमाकर इसे खड़ा किया होगा और तीसरा व्यक्ति सोचता है कि आज रात अगर इसमें सेंध लगाई जाए तो काफी धन-माल मिल सकता है।

चीज़ एक है पर उसके प्रति तीनों की वृत्तियाँ, विचार और भावनाएँ अलग-अलग हैं। प्रथम के भाव प्रशंसा भरे हैं अत: वह पुण्यात्मा है। दूसरे के भाव अवगुणग्राही हैं तथा ईर्ष्या-द्वेष से भरे हैं अत: वह साधारण आत्मा है और तीसरे के भाव लालच से भरे हैं, स्वार्थ, तृष्णाओं और इच्छाओं से रंगें हैं अत: वह पापात्मा है तीनों अवस्थाओं में आँखें तो निर्लेप हैं परन्तु आत्मा निर्लेप नहीं है इसलिए कहा जाता है कि हत्या करके व्यक्ति छुरे पर लगा खून धो सकता है पर आत्मा पर छपे हिंसा के संस्कार रूपी धब्बे को नहीं। चोरी से चीज खाकर हाथ-मुँह पोंछ-धो सकता है पर आत्मा पर लगे चोरी के दाग को नहीं। किसी पर काम कटारी चलाकर, उसे तन-मन से हलाल करके छिप सकता है, मुकर सकता है पर आत्मा के कटारी जैसे भयंकर संस्कारों से पीछा नहीं छुड़ा सकता।अत: किसी भी विकार के वश होने पर, उसका संस्कार, कैमरे में सुरक्षित हो जाने वाले नेगेटिव की तरह आत्मा में सुरक्षित हो जाता है। उस संस्कार रूपी नेगेटिव के पोजिटिव होने पर वह पाप जग जाहिर हो जाता है और करने वाला उसके कड़वे फल को खाने के लिए मजबूर हो जाता है।

ईश्वरीय किरणें आत्मा को उजला बनाती हैं

किसी भी पापकर्म के दो गवाह हमेशा होते हैं– एक मैं आत्मा स्वयं और दूसरा पिता परमात्मा। दूसरों की धिक्कार से बचने के लिए स्थान छोड़ा जा सकता है पर स्वयं की धिक्कार से बचने की जगह तीनों लोकों में कहीं नहीं है। ईश्वर की नज़रों से ओझल होने का भी कोई स्थान आज तक न बना है और न बन सकता है। अत: हरेक को बार-बार यह अभ्यास करना चाहिए कि मैं शरीर और इसकी कर्मेन्द्रियों की मालिक आत्मा हूँ, इनको नियन्त्रित करने के निमित्त हूँ, इनके द्वारा सेवा करवा के पुण्य अर्जित करने वाली आत्मा हूँ, इस कलियुगी शरीर को पुण्य की कमाई में लगाना है , गन्दी दृष्टि-वृत्ति, गलत बोल-चाल-चलन के अधीन होकर इन इन्द्रियों की गुलामी नहीं करनी है। इस शरीर का सबसे बड़ा गहना या सजावट ईश्वर सेवा और मानव सेवा ही है। इसके लिए एकान्त में बैठ कर अपने को देखना, परखना, अपने को समझना, अपने को सुधारना और अपने को बदलना है। जितने विकर्म हुए हैं उनसे कई गुणा सुकर्म करके अपने दाग साफ करने हैं। बेदाग बनना है।

विज्ञान के इस युग ने शरीर पर लगे हर दाग को मिटाने की दवा उपलब्ध करवाई है। आए दिन हम

विज्ञापन पढ़ते हैं कि पुराने से पुराने दाग, गहरे से गहरे दाग, सफेद दाग, काले दाग, कपड़े के दाग, त्वचा के दाग, चेहरे के दाग, चेचक के दाग, फोड़े-फुंसी के दाग, जली अथवा कटी त्वचा के दाग मिटाने की दवाई उपलब्ध है परन्तु सवाल यह है कि क्या विज्ञान के पास ऐसी कोई दवा है जिससे आत्मा पर लगे हत्या, चोरी, काम वासना आदि के दाग काफ़ूर हो जाएं और वह उजली, निष्पाप, निष्कलंक हो जाए। आज विज्ञान प्लास्टिक सर्जरी करके काले चेहरे को गोरा, मोटी नाक को पतला और कम सुन्दर इन्द्रियों को अधिक सुन्दर बना सकता है पर क्या काले कारनामों को किसी विधि से उजले कर्मों में बदल सकता है ? नहीं। साइन्स की शक्ति से भी बड़ी शक्ति है साइलेन्स की अर्थात् अध्यात्म की और राजयोग की। इस शान्ति की शक्ति से मन को मौन अवस्था में रखकर आत्मा चांद-तारों से पार अलौकिक देश में जाकर परम उजले परमपिता परमात्मा के सामने जब विराजमान होती है तो उसके सभी दाग-धब्बे मिट जाते हैं। जैसे विज्ञान की लेज़र किरण शरीर के अनचाहे पदार्थ जला देती है , इसी प्रकार, ईश्वर पिता से प्रवाहित होने वाले ईश्वरीय बल से भरपूर,ये अलौकिक लेज़र किरणें भी आत्मा के सर्व दाग-धब्बे मिटाकर उसे उजला बना देती हैं।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

सच्चा ठिकाना

– ब्रह्माकुमार राजवीर, बड़ौत –

जिन्दगी भर जिसे मैं ढूँढ़ता रहा,
मिल गया अब वो सच्चा ठिकाना मुझे।
बाबा तुमको तो मैं अब ना छोड़ूँ कभी,
चाहे रोके ये सारा ज़माना मुझे।
जिन्दगी भर .....

अल्प बुद्धि था मैं, मैं तो अनजान था,
अपना खुद का ही मुझको कहाँ ज्ञान था।
कण-कण में समझता मैं भगवान था,
खुद पे आवे हँसी कितना नादान था।।
कोई देखे तो तेरी ये कारीगिरी,
छू के पत्थर को हीरा बनाना मुझे
जिन्दगी भर .....

कोई आके यहाँ एक बार देख ले,
ब्रह्मा वत्सों का ये संसार देख ले।
कहते हैं किसे दिल का प्यार देख ले,
प्रभु करते हैं कैसे दुलार देख ले।।
बीती बातों से अब मेरा नाता नहीं,
अलविदा माया, भूल जाना मुझे
जिन्दगी भर .....

भाव बेहद का सबमें समाया यहाँ,
ढूँढ़े से ना मिले कोई पराया यहाँ।
ले के सच्ची लगन जो भी आया यहाँ,
बाकी कुछ ना रहा, सब कुछ पाया यहाँ।।
मेरी किस्मत तो आकर देखे कोई,
सच्चे सुख का मिला है खजाना मुझे
जिन्दगी भर .....

★

पुरुषोत्तम संगमयुग और विश्व में एक समान संस्कारों का निर्माण

–ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुम्बई)

वर्तमान विश्व में विज्ञान के अनेक प्रकार के सुख-साधनों का निर्माण हुआ है। यातायात भी सहज, सरल और सुविधाजनक हो गया है जिसके परिणामस्वरूप विश्व संकुचित होता जा रहा है। पहले पानी के जहाज द्वारा लंदन से भारत आने में बहुत समय लगता था परन्तु आज केवल 8 घण्टा लगते हैं। इस प्रकार देखें तो एक वैश्विक गांव (Global Village) बन गया है। इसलिए एक स्थान पर हुई घटनाओं का प्रभाव दूसरे स्थान पर भी तुरन्त पड़ता है। उदाहरणार्थ अभी-अभी लंदन में जब 5 बॉम्बस फटे तो मुम्बई के शेयर बाजार (Stock Exchange) के शेयर्स के दामों में गिरावट आ गई, जिस के कारण सिर्फ एक दिन में ही 33 हज़ार करोड़ रुपये का घाटा भारत के अंश-धारकों को हो गया। आज से 100 साल पहले किसी देश में ऐसी कोई घटना होती थी तो दूसरे देश वालों को पता भी नहीं होता था।

प्यारे शिव बाबा ने भी आध्यात्मिक ज्ञान के बल से वैश्विक दैवी परिवार का निर्माण किया है। इस दैवी परिवार में अभी 8 लाख से अधिक भाई-बहनें हैं, वे सभी एक समान स्वभाव-संस्कार धारण करने के लिए, एक समान योग-साधना करते हैं। एक ही परमपिता परमात्मा की मधुर स्मृति में रहने का पुरुषार्थ करते हैं। सभी अपने-अपने स्थान के समयानुसार प्रात: 4 बजे योगाभ्यास करते हैं और सभी जगह दिन में 5 बार ट्रेफिक कन्ट्रोल का अभ्यास करते हैं। सभी भाई-बहनें भोजन स्वीकार करने से पहले शिव बाबा को भोग लगाते हैं और शिव बाबा की मधुर स्मृति में ही भोजन करते हैं। संस्कार परिवर्तन के लिए यह एक समान जीवन व्यवहार बहुत बड़ी बात है।

पवित्र भोजन और आहार-शुद्धि संस्कारों में एकता लाने में बहुत आवश्यक है। वह प्रयोग भी परमपिता परमात्मा वैश्विक स्तर पर हम बच्चों को निमित्त बनाकर करा रहे हैं। विश्व में जितने भी देश हैं, उतने ही अलग-अलग प्रकार के खान-पान की रुचि के संस्कार मनुष्यों में होते हैं परन्तु आदरणीया दादी जानकी जी ने विदेशों में भी सभी सेवाकेन्द्रों तथा सारे ही दैवी परिवार के भाई-बहनों में यह संस्कार डाला है कि सभी रोज ताजा भोजन बना कर प्यारे शिव बाबा को भोग लगाकर खायेंगे। पहले अज्ञान काल में विदेशों में लोग समय की कमी और आलस्य आदि के कारण रविवार को ही ताजा भोजन दाल-सब्जी आदि बनाते थे और उसको डीप फ्रिज में रख देते थे और उसमें से रोज थोड़ा-थोड़ा निकाल कर गरम करके खाते रहते थे। भोजन के पदार्थों में भी शाकाहार के बदली अनेक प्रकार के मिश्रित आहार होते थे। ईश्वरीय ज्ञान और ईश्वरीय जीवन व्यवहार से आहार-विहार, स्वाद आदि सब परिवर्तन हो गया है और सभी एक समान पवित्र शाकाहारी भोजन खाते हैं। इस प्रकार से जब संस्कारों में एकता आयेगी, तब ही विश्व में एकता आयेगी। नहीं तो संस्कारों की भिन्नता के कारण आपस में मतभेद और संघर्ष होता है। परस्पर संघर्ष के कारण मन में अशान्ति आती है और कभी-कभी बड़े रूप में युद्ध आदि भी होते हैं।

शिव बाबा ने संस्कारों में एकता लाने के लिए धार्मिक विचारों में भी बड़ा परिवर्तन लाया है। आज विश्व में अनेक प्रकार के धर्म, सम्प्रदाय आदि हैं जिनकी अपनी-अपनी

मान्यतायें, जीवन-शैली, कर्मकाण्ड, विधि-विधान आदि हैं। उदाहरणार्थ बंगाल में नव-वधू हाथ में मछली लेकर गृह-प्रवेश करती है और वहाँ यह भी मान्यता थी कि हर पत्नी को मछली अवश्य खानी चाहिए अन्यथा उसके पति का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहेगा और उसकी आयु भी कम होगी। यदि वह नहीं खाती थी तो उसकी सास उस पर दबाव डालती थी और प्रताड़ना देती थी लेकिन अभी उसी बंगाल में शिव बाबा के ज्ञान के द्वारा अनेक परिवारों के संस्कारों में परिवर्तन आया है। पुरानी मान्यतायें परिवर्तित हो गई हैं। इस प्रकार सभी धर्म, सम्प्रदायों के अन्धश्रद्धायुक्त रीति-रिवाजों और मान्यताओं में परिवर्तन लाने का जो पुरुषार्थ शिव बाबा इस दैवी परिवार द्वारा करा रहे हैं, वह देखने में तो बहुत छोटी बात लगती है परन्तु है बहुत विशाल क्योंकि इसके आधार पर ही रीति-रिवाजों और दिनचर्या की विषमताओं के घने जंगल में फंसे लोग निकल पायेंगे।

इसी प्रकार, भौतिक जगत में सिनेमा मनोरंजन का साधन है परन्तु दैवी परिवार में इसे पाप-वृत्ति को जागृत करने का कारण अर्थात सिन (पाप) की माँ माना जाता है। ऐसे ही फैशन आदि की अनेकानेक बातें हैं, जो मनुष्यों में वासनाओं को उद्दीप्त करती हैं। जिनके कारण समाज में अनेक प्रकार के कुकर्म होते हैं। परन्तु वे सब बातें हमारे जीवन से ऐसे खत्म हो गई हैं, जैसे कि वे हमारे किसी पूर्व जन्म की बातें थीं। जिन फिल्मी कलाकारों की फिल्में कभी देखी थीं, आज उनको साकार में सामने देखते हुए भी मैं पहचान नहीं पाता हूँ। संस्कार परिवर्तन में ये भी आवश्यक है कि तमोप्रधान संस्कारों की निवृत्ति हो और सतोप्रधान संस्कारों की धारणा भी हो। तमोगुणी संस्कारों की निवृत्ति विश्व एकता लाने में एक बड़ी आवश्यक बात है। देहली के एक बड़े सरकारी अधिकारी ने अपना अनुभव सुनाया कि मुझे सिगरेट पीने की बहुत बुरी आदत थी। डाक्टरों के मना करने पर भी मेरी आदत नहीं छूटी, अनेक संस्थाओं के परामर्श को अपनाकर मैंने उस आदत को छोड़ने का पुरुषार्थ किया परन्तु नहीं छूटी। लेकिन शिव बाबा का बच्चा बनने अर्थात् दैवी परिवार में आने से न सिर्फ वह आदत छूट गई बल्कि इतना परिवर्तन हो गया कि अब किसी अन्य व्यक्ति के धूम्रपान के धुएँ से उल्टी होने लगती है।

संस्कार परिवर्तन की ये बातें कितनी क्रान्तिकारी हैं। जिन संस्कारों को दुनिया का कोई कानून नहीं बदल सकता, वे इस ईश्वरीय ज्ञान से सहज परिवर्तित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ दहेज प्रथा को खत्म करने के लिए भारत सरकार ने कानून बनाये, शराबबन्दी के लिए अमेरिका (USA) ने भी कानून बनाये परन्तु वे सभी निष्फल रहे हैं परन्तु ईश्वरीय कानून सहज रूप से मानव को परिवर्तन कर रहे हैं। इस ईश्वरीय कानून और दैवी सभ्यता का विश्व में एकता लाने में बड़ा योगदान है। इन्हीं बातों के आधार पर कलियुग परिवर्तन होकर सतयुग आयेगा। सतयुग को दुनिया का कोई कानून नहीं ला सकता है, यह वास्तविकता है। **संस्कार परिवर्तन के लिए जो हृदय परिवर्तन चाहिए, वह दुनिया का कोई भी कानून नहीं करा सकता है और जब तक हृदय परिवर्तन नहीं होता तब तक आध्यात्मिक उन्नति एवं एकता नहीं हो सकती।** हम तो चाहते हैं कि संस्कार परिवर्तन के ऐसे अद्भुत अनुभव जिन भाई-बहनों के हों, वे लिखकर भेजें तो हम दिव्य परिवर्तन और अनुभवों की एक किताब छपवायें, जिससे सिद्ध हो कि यह ईश्वरीय ज्ञान और उससे बनी विचारधारा कितनी प्रबल और श्रेष्ठ है तथा परमात्मा के द्वारा स्वभाव-संस्कार परिवर्तन का कार्य कितना श्रेष्ठ है। इसी से एक समान प्रेम, स्नेह सद्भाव आदि से सम्पन्न नया समाज अर्थात् नया विश्व बनेगा।

आत्मा का भोजन

–ब्रह्माकुमारी सुलोचना साहू, भुवनेश्वर

हमारे पूर्वजों ने कहा है कि खाना एक गुना, पीना दो गुना, कसरत तीन गुना, हँसना चार गुना और प्रभु चिंतन पाँच गुना होना चाहिए। यह नियम अगर ठीक से उपयोग में लाएं तो सब खुशी से भरपूर स्वस्थ जीवन बिता सकते हैं। देहाभिमानी मनुष्य शरीर और आत्मा को एक मान कर, केवल शरीर को ही सुंदर और सुडौल बनाने में लगा रहता है जबकि शरीर तो विनाशी है और आत्मा अविनाशी है। आत्मा के बिना शरीर बेकार है। आत्मा वह ऊर्जा है, जो शरीर को चलाए रखती है। आत्मा को शरीर इसलिए प्राप्त होता है ताकि आत्मा श्रेष्ठ चिंतन, अच्छा पुरुषार्थ तथा सुकर्म करके स्व-सेवा तथा विश्व-सेवा के निमित्त बन सके। अत: प्रभु चिंतन हर आत्मा के लिए अति आवश्यक है।

शरीर को खिलाने-पिलाने के लिए प्रकृति ने अनेक प्रकार की चीज़ों की व्यवस्था की है लेकिन आत्मा तो अदृश्य है। उसको चर्म-चक्षु देख नहीं सकते। आत्मा को तीसरे नेत्र या ज्ञान-नेत्र से ही देखा जा सकता है। ज्ञान-नेत्र खोलने के लिए ईश्वर पिता द्वारा दिया गया सृष्टि के आदि-मध्य-अंत का ज्ञान चाहिये। जिस प्रकार मांसाहार और तामसिक भोजन से शरीर रोगग्रस्त हो जाता है, उसी प्रकार परचिंतन, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, लोभ, मोह, काम, क्रोध के गंदे विचारों के भोजन से आत्मा अपवित्र बन जाती है। आत्मा के लिए शुभचिंतन, सद्भावना तथा पवित्रता रूपी भोजन जरूरी है। प्रभुचिंतन ही आत्मा का सर्वोत्तम भोजन है। एक बार महात्मा गांधी अपने एक वकील मित्र से वार्तालाप कर रहे थे। वकील दोस्त ने गांधी जी से कहा – आप प्रार्थना में बहुत समय नष्ट कर देते हैं, उस समय को आप देशसेवा में नियोजित करें तो कितना कार्य हो जाए? गांधी जी सुनकर मौन हो गए। कुछ क्षणों के बाद गंभीरतापूर्वक बोले – आप भोजन खाने में कितना समय लगाते हैं? वकील ने जवाब दिया – यही कोई बीस या तीस मिनट। गांधी जी ने कहा – उस समय को यदि आप वकालत का अभ्यास करने में लगाएं तो इससे आपका धंधा और भी अच्छा हो जायेगा। वकील ने तुरंत जवाब दिया – ऐसा कैसे हो सकता है, मैं खाऊंगा नहीं तो काम कैसे करुँगा? भोजन मेरे शरीर के लिए बहुत ज़रूरी है। गांधी जी ने हँसकर कहा – आपने ठीक कहा लेकिन शरीर के लिए भोजन जितना ज़रूरी है, **उतनी ही प्रार्थना भी आत्मा के लिए ज़रूरी है। भोजन से शरीर को और प्रार्थना या प्रभुचिंतन से आत्मा को शक्ति मिलती है। देश सेवा करने की शक्ति प्रार्थना से ही आती है। इसी से मैं खुश रहता हूँ।** ❑❑

योग में मन कहाँ टिकायें..........पृष्ठ......01 का शेष

या वस्त्र पर एकाग्र नहीं करना होता बल्कि परमपिता परम **आत्मा** पर करना होता है। अत: **'एकाग्रता'** (Concentration) शब्द ही इस बात का द्योतक है कि किसी दीर्घाकार पर नहीं बल्कि किसी **एक बिन्दु** पर मन को केन्द्रीभूत करना है और परमात्मा को ज्योतिबिन्दु जानकर उस पर ही मन को तल्लीन करना वास्तविक योग है। शिवलिङ्ग पर लगे बिन्दु पर भी नहीं, वास्तव में हमें तो सीधे उस ज्योति-स्वरूप, बिन्दु रूप शिव ही पर मन को ठिकाना देना है क्योंकि जिसकी यह प्रतिमा है, हमारा वह प्रीतम चेतन है। कई लोग अपने सामने किसी पटल पर कई वृत्त अंकित कर लेते हैं। वे पहले अपने ध्यान को बड़े वृत्त के भीतर ही सीमित करते हैं। उसके पश्चात् वे छोटे, फिर उससे भी छोटे वृत्त में अपना ध्यान अथवा अपनी दृष्टि को बाँधकर आखिर में उसे केन्द्र-बिन्दु पर टिकाते हैं। वास्तव में ऐसा कृत्रिम अभ्यास करने की बजाय **हमें यह समझना चाहिए कि यह संसार एक बड़ा वृत्त है, देश उससे छोटा वृत्त है, परिवार उससे भी छोटा वृत्त है – इन सभी वृत्तों से घिरा हुआ जो ज्योतिबिन्दु आत्मन है, उस पर ही मन को टिकाना योग है। योगाभ्यास के समय आत्म-निष्ठ होना तथा परमात्मा रूपी बिन्दु पर मन को केन्द्रीभूत करना ही योग है।** ❑❑

शिव बाबा सबको देखता है

–गोमती प्रसाद 'विकल', रीवा

आबू पर्वत की उपत्यका (तलहटी) में विस्तारित शांतिवन आश्रम प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। प्रकृति ने मुक्त हस्त से इस आश्रम को अपना वरदान और वैभव लुटाया है। वृक्ष-लतिकाओं की हरीतिमा, पुष्पों की महक, पक्षियों की चहक में घुली शान्ति की लहर मन-प्राण को तृप्त करती है। आश्रम का प्रबंधन अनुकरणीय है। श्रेष्ठ जीवन जीने का पाथेय (भोजन) है। कहीं कोई प्रशासक और पहरेदार दिखाई नहीं देता। फिर भी शान्ति और अनुशासित जीवन शैली सर्वत्र पसरी है। कक्ष और कार्यालयों में ताले नहीं लटकते, कोई किसी को रोकता-टोकता नहीं। सब अपने-अपने ध्येय की ओर अग्रसर रहते हैं। सेवाधारियों का आचरण चैतन्य पाठशाला जैसा है जिनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है। स्वच्छ धवल परिधान में सेवाधारी चलते-फिरते देखे जा सकते हैं। उनकी आंखों में स्नेह और वाणी में नम्रता घुली रहती है। वे सेवा की साकार मूर्ति हैं और 'ओमशान्ति' का उच्चारण करते हुए आगंतुकों को अपने से जोड़ लेते हैं तथा आश्रम के वातावरण के साथ एकरस कर लेते हैं।

आश्रम की साफ-सफाई से लेकर भोजन व्यवस्था की पवित्रता और आत्मीयता श्रेष्ठ और सुंदर है। भारी भीड़ में भी कहीं कोई रेलमपेल नहीं होती है। अतिथिगण शांतिपूर्वक 9बाबा" की रसोई में सुस्वादु प्रसाद ग्रहण करते हैं। शांतिवन की संपन्नता और सात्विकता देखकर प्राचीन ऋषि-मुनियों के आश्रम की व्यवस्था और मर्यादा का स्मरण सहज ही जाग उठता है। सहजता, पवित्रता और सेवा के साथ-साथ ध्यान और धारणा आश्रम की केंद्रीयता है। आश्रम का मूल ध्येय ध्यान है। ध्यान की विधिवत् प्रक्रिया सिखाई जाती है। आत्मा-परमात्मा का विशद् विश्लेषण किया जाता है। ध्यान प्रविधि का सारांश है – मैं आत्मा हूँ, देह वस्त्र और घर के समान है। परमात्मा सूर्य-चंद्र और सितारों के पार अरुणिम प्रकाश वाले ब्रह्मलोक में स्थित हैं। उनका रूप ज्योतिबिंदु स्वरूप है। ध्यान आत्मा से परमात्मा के मिलन की यात्रा है। परम शान्ति और परम आनन्द ध्यान का प्रसाद है।

सात्विक शान्ति और सुखानुभूति का दूसरा आधार 'बाबा की मुरली' है। मुरली का अभिप्राय है ज्ञान के महावाक्य। इसकी उपलब्धि है अपने अन्तर्मन की गुफा में उतर कर परमात्मा के चिंतन में लीन होना। इससे प्रेम और करुणा का प्रसार होता है। कहते हैं कि गोप शब्द का अर्थ होता है गुप्त, इसी से गोपनीय शब्द बना है। बाबा की मुरली सुनने वाले गोप, गोपियाँ गोपनीय ही रहते हैं। अन्य लोगों को, जो भावना रहित हैं, मुरली सुनाई ही नहीं देती। यही मुरली का रहस्य है। जो प्रीतबुद्धि नहीं है उसे उसका अर्थ समझ में नहीं आता है।

शांतिधाम, रीवा (मध्य प्रदेश) की ब्रह्माकुमारी बहन निर्मला जी प्राय: सत्संग का आयोजन करती रहती हैं। बाबा की मुरली की प्रतिध्वनि जिज्ञासुओं को सुनाती हैं। जिज्ञासु भाँति-भाँति के होते हैं। उनमें एकरसता नहीं होती। शायद यह नियति का नियम है। संत तुलसीदास ने भी इस सत्य पर अपनी मोहर लगाई है – 'तुलसी यह संसार मा, भाँति-भाँति के लोग।' बहन निर्मला जी जिज्ञासुओं के प्रश्नों का उत्तर बड़ी सावधानीपूर्वक सुवाच्य भाषा में देती हैं। फिर भी कोई जिज्ञासु संतुष्ट नहीं होता तब उनका विनम्र उत्तर होता है – 'बाबा के धाम माउंट आबू (राजस्थान) में पहुँचिए, वहाँ आपके सभी प्रश्नों का उत्तर मिल जायेगा।

दो बातें विश्वासपूर्वक जोर देकर कही जाती हैं – 1 बाबा सबको सर्वत्र देखता रहता है। बाबा के धाम में सब प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है। इन्हीं संवादों और सम्बोधनों से अनुप्राणित होकर रीवा से ब्रह्माकुमार प्रकाश भाई के मार्ग-दर्शन में सोलह लोगों का समूह 25 सितम्बर से 29 सितम्बर, 2004 तक आयोजित होने वाले मीडिया सम्मेलन में भाग लेने के लिए, आबू रोड (राजस्थान) पहुँचा। यात्रा तो यात्रा होती है जहाँ कुछ मात्रा में सुविधा, असुविधा का खेल होना स्वाभाविक है। किंतु यदि यात्रा के गंतव्य में सुविधा-असुविधा के परे मनोभावों को संतुष्टि मिल जाये तब सब कुछ सार्थक हो जाता है।

शांतिवन में पहुँचना आत्मलोक में पहुँचना है। वहाँ आत्मीयता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। मन का मैल धुल जाता है। द्वैत भाव दूर हो जाता है। कण-कण में 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की अनुगूँज सुनाई पड़ती है। ऐसे ईश्वरीय वातावरण में मुझे दो प्रश्नों के उत्तर की तलाश थी। पहला प्रश्न कि बाबा सबको देखता है और दूसरा यह कि वहाँ सब प्रश्नों का समाधान मिल जाता है। पहले प्रश्न का समाधान चमत्कारिक ढंग से घटित हुआ। अवसाद और उल्लास के क्षणों में धूम्रपान मेरे स्वभाव में है। शांतिवन पहुँचने पर दिन भर इस कुटेव को टालता रहा। रात्रि के प्रथम पहर में भी साहस बनाये रहा। रात्रि के समय 10 बजे के लगभग आत्मनियंत्रण जवाब दे गया और मैंने परिसर में एकांत और निर्जन स्थान खोज निकाला। मेरी दृष्टि में वृक्षों और वनस्पतियों के अतिरिक्त वहाँ किसी की उपस्थिति नहीं थी। सिगरेट का एक टुकड़ा जलाकर होंठो में दबाया ही था कि एक साइकिल सवार सेवाधारी अचानक आ धमका और नो स्मोकिंग (धुम्रपान नहीं) कहता हुआ अन्तर्ध्यान हो गया। इस अप्रत्याशित हस्तक्षेप से मैं आत्मग्लानि में डूब गया। बाबा सबको सर्वत्र देखता है, इस कथन की पुष्टि हो गई।

दूसरे प्रश्न का समाधान सहयात्री सोनी जी के विचार परिवर्तन से हुआ। सोनी जी अनुभव संपन्न और दृढ़ विचार वाले व्यक्ति हैं। सहसा वे किसी बात से सहमत नहीं होते। शान्तिवन में भी वे कई दिनों तक खंडन-मंडन करते रहे। आश्रम के कतिपय कार्य-कलापों से एक मत नहीं हुए। आबू दर्शन के पश्चात् सोनी जी पिघल गए। विश्व नवनिर्माण आध्यात्मिक संग्रहालय और ज्ञान सरोवर विद्यापीठ से निकलने के बाद मुक्तकंठ से कहा – सचमुच शांतिवन में आने पर सब बातों का उत्तर मिल जाता है। उपर्युक्त तथ्य शांतिवन की मर्यादा के परिचायक हैं। परिचय का पथ प्रतीत से होकर प्रीति की दशा तक जाता है। संत तुलसीदास जी का सूत्र है –

जाने बिन न होय परतीती।
बिन परतीत होय नहिं प्रीति।।

रीवा –म.प्र. के परिवहन राज्यमंत्री भ्राता उमाशंकर गुप्ता को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. डॉ. अर्चना बहन एवं ब्र.कु. नम्रता बहन । साथ में हैं पर्यावरण राज्यमंत्री भ्राता राजेन्द्र शुक्ल, विधायक भ्राता नागेन्द्र सिंह एवं समाजसेवी भ्राता नारायण दिगवानी ।

'पत्र' सम्पादक के नाम

प्रश्न – एक विद्यार्थी, जो आर्थिक रूप से परिवार पर आश्रित है, खर्च के लिए मिलने वाले धन में से बचत कर ईश्वरीय सेवा में लगाता है। इसका पुण्य किसको मिलेगा, विद्यार्थी को या परिवार वालों को।

– विजयराज पाटिल, महाराष्ट्र

उत्तर – भारत में प्राचीन काल से यह मान्यता चली आ रही है कि बचत करना भी एक प्रकार की कमाई है। और उस बचत रूपी कमाई को यदि सर्वोच्च ईश्वर की सेवा में अर्पण कर दिया जाए तो यह पुण्य अर्जित करने का बहुत सुन्दर साधन है। इसका फल बचत करने वाले तथा मूल रूप से धन कमाने वाले– दोनों को मिलेगा। स्वयं द्वारा कमाए गए धन को ईश्वरीय कार्य में लगाने पर उस धन का शत प्रतिशत पुण्य मिलेगा पर दूसरे द्वारा कमाए गए धन को, अपनी इच्छाओं में कटौती करके, बचत करके ईश्वरीय कार्य में लगाने से पुण्य में भागीदारी हो जायेगी। यज्ञ के स्थापना-काल में प्यारे साकार बाबा बच्चों को कर्मों की यह गुह्य गति अच्छी प्रकार सिखाते, समझाते और अनुभव कराते थे। बाबा कहते थे कि समर्पित बच्चे धन कमाते नहीं हैं लेकिन प्रवृत्ति वालों द्वारा यज्ञ-सेवा अर्थ अर्पित धन का सदुपयोग करते हैं। अत: यज्ञ का एक-एक कणा-दाना मोहर के समान कीमती समझकर निमित्त बच्चों को उसकी सुरक्षा करनी चाहिए। इसी प्रकार कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसी भी क्षेत्र में, किसी भी सेवा में है, अपनी इच्छाओं को कम करके बचत करता है और उसको विश्वहित सद्‌कार्य में लगाता है तो उसका और उस धन को उपलब्ध कराने के निमित्त व्यक्ति का भी पुण्य बनता ही है। परन्तु बचत करने की भी एक मर्यादा-सीमा है। किसी दूसरे के हक को मारकर बचत करना या लोभ तथा कंजूसी वश आवश्यकताओं की पूर्ति न करके बचत करना – यह गलत है। ऐसी बचत की एक निशानी यह होती है कि वह ईश्वरीय कार्य में भी नहीं लग सकती क्योंकि उस बचत के पीछे त्याग का भाव न होकर लोभ या कंजूसी का भाव है। वह वास्तव में बचत न होकर अनावश्यक संग्रह ही है।

◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇

जुलाई 05 के अंक का सम्पादकीय 'फैशन का फंदा' अभी के परिवेश के लिए बहुत ज्यादा उपयुक्त है। इससे सभी स्वयं को और दूसरों को भी डबल अहिंसक बना सकेंगे। शरीर और इसका शृंगार दोनों ही विनाशी हैं, प्यारे बाबा के अनुसार सच्चा अविनाशी शृंगार तो गुणों का है जो कि शाश्वत है और जो दूसरों में हमेशा ईर्ष्या के स्थान पर श्रद्धा और सम्मान के भाव पैदा करता है। दूसरे की निगाह में अच्छा दिखने की ललक ही आज तनाव का भी मुख्य कारण है। आपके इस सुन्दर लेख के लिए एक बार फिर धन्यवाद दिए बिना स्वयं को हल्का नहीं कर पाऊँगा।

– ब्रह्माकुमार उमेश, रोहतक

◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇

"ज्ञानामृत" के जुलाई, 2005 अंक में प्रकाशित सुप्रसिद्ध विद्वान तथा राजनीतिज्ञ डा. श्यामसुन्दर महापात्र का लेख 'ईश्वरीय शक्ति का साकार अहसास' बहुत प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। उन्होंने खुद का अनुभव ज्ञानामृत के साथ साक्षात्कार में व्यक्त किया है। उस लेख को मैंने चार बार पढ़ा है। बाबा सदा मेरे साथ है और मदद करते रहते हैं, इस बात पर मेरा इतना विश्वास बैठ गया है कि चाहे कुछ भी हो जाए अब यह निश्चय नहीं डगमगायेगा। ऐसे अनुभवयुक्त लेख ज्ञानामृत में प्रकट होते रहने से बहुतों का हित हो सकता है। मैं तो उस लेख को पढ़कर अपने आपको धन्य समझ रहा हूँ। डा. श्यामसुन्दर महापात्र को,आपको तथा बाबा को धन्यवाद देना चाहता हूँ ,कृपया स्वीकार करें।

– ब्रह्माकुमार बंडप्पा खूबा, हुमनाबाद (कर्नाटक)

★★

संस्कृत, संस्कृति एवं संस्कार

—ब्रह्माकुमार सतीश, आबू पर्वत

प्राचीन भारतीय वांङ्गमय की रचना प्राय: संस्कृत भाषा में है। सभी आर्य ग्रन्थ इसी संस्कृत भाषा में उल्लिखित हैं। निस्संदेह आज प्रचलित तमाम देशी एवं प्रादेशिक भाषाओं पर संस्कृत का स्पष्ट प्रभाव है। यही नहीं, अनेकों राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं में भी संस्कृत के शब्द बहुतायत में मिलते हैं। संस्कृत की मौलिकता, विशिष्टता, विविधता, व्याकरणीय संरचना तथा इसकी समृद्धि के कारण इसे देव भाषा भी कहा गया है। किन्तु इसे विडम्बना ही कहेंगे कि आज अपसंस्कृतियों एवं भाषाई विवादों के झंझावातों ने हमें अपने मूल से झकझोर कर, पृथक कर दिया है।

पाँच सितम्बर को शिक्षक दिवस व संस्कृत दिवस के रूप में मनाया जाता है। सम्भवत: संस्कृत भाषा के प्रसार व अधिक प्रयोग में लाने को प्रोत्साहन देने हेतु ऐसा प्रयास किया जा रहा हो। फिर भी विनाशोन्मुख आधुनिक समाज अपनी उच्च संस्कृत एवं संस्कृति से दूर ही होता जा रहा है। चाहे इसके पृष्ठ में भाषाई क्लिष्टता, पिछड़ापन, बीते युग की बातें या दोगली नीति अथवा उपेक्षाभाव ही हो। वैसे आज जब सामाजिक परिवेष पाश्चात्य संस्कृति के साथ में तथाकथित प्रगतिवादी एवं वैज्ञानिकता से विकसित दिशा की ओर बढ़ रहा हो, सामने विनाश का ताण्डव और मौत का मंज़र हो, ऐसे में संस्कृत की शिक्षा के लिए जीतोड़ प्रयास ऐसा ही है जैसे प्यासे के लिए कुआँ खोदना। अब तो जो भी भाषा हमारी हो, उसमें ही हमें अपनी कृति को सुकृति बनाने, चित्र व चरित्र को सच्चरित्र में परिवर्तन की आवश्यकता है।

भाषा, भावों व विचारों का लिबास है। महात्मा गाँधी जी कहते हैं – **भाषा बुद्धि के सहारे चलती है। इसलिए जब किसी विषय तक बुद्धि नहीं पहुँचती तो भाषा अधूरी होती है।** वैसे भी भावाभिव्यक्ति के लिए भाषा का अवलम्ब लिया जाता है। यदि हमारे भाव उत्तम हैं तो भाषा उसका अनुसरण कर लेती है। किन्तु आज भाषा विवाद के पचड़े में पड़ने की बजाय भावों को सद्भावना में बदलने की ज़रूरत है। आध्यात्मिक मूल्यों के मालियों की आवश्यकता है जो सद्विचार के सुमन से जग चमन को सुवासित कर सकें।

वर्तमान में हमारी राष्ट्र भाषा

आज विश्व की 600 खरब जनसंख्या के पीछे 6 हज़ार भाषायें प्रचलित हैं जिनमें से कितनी भाषायें काल चक्र में दम तोड़ती लुप्त प्राय: हो गईं। भाषाओं की उत्पत्ति और उनके विनाश का भी इतिहास है, उनका कारण है। पहले जब यातायात व सम्पर्क सूचना के साधन नहीं थे तो व्यवहारिक आवश्यकता की पूर्ति के साधन रूप में भाषाएँ इजाद हुईं। जिस भाषा को जितने लोगों ने व्यवहारित किया, उसका प्रचार-प्रसार किया उतना ही वह समृद्ध होती गई किन्तु जिन भाषाओं पर अन्य भाषाओं का अतिक्रमण हुआ और स्थानीय भाषाओं की उपेक्षा की गई शनै:-शनै: वे भाषायें कालकवलित हो गईं। अपनी राष्ट्र भाषा हिन्दी है जो विश्व की तीसरे नम्बर की भाषा है। अब तो हिन्दी का प्रयोग अहिन्दी क्षेत्र में भी विरोधों के बावजूद बहुतायत में होने लगा है। अन्यथा भारतवर्ष में ही 600 से अधिक भाषायें हैं। भाषा की दृष्टि से सर्वाधिक विविधता अपने ही देश में है। यहाँ तो कहावत प्रसिद्ध है – कोस-कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी।

अवश्यम्भावी है एक विश्व भाषा

इसे विडम्बना ही कहेंगे कि

भाषायी विविधता व पूर्वाग्राही मान्यताओं के चलते विश्व में अनेकों बार खून की नदियाँ बही हैं। वास्तव में भाषाओं का यह लक्ष्य और उद्देश्य नहीं है। भाषा तो संस्कृति का वाहन है। अन्तर की अभिव्यक्ति एवं व्यवहार का माध्यम है।

विश्व आज जब वैश्विक ग्राम का रूप ग्रहण करता जा रहा है तो इससे इस बात के प्रमाण अधिक पुष्ट हो रहे हैं कि नई विश्व व्यवस्था में एक ही भाषा प्रचलित होगी। एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा, एक कुल व एक मत से विश्व एकता व स्वस्थ व्यवस्था कायम होगी। 21वीं सदी में एक विश्व भाषा का स्वप्न साकार होगा।

सभ्यता एवं संस्कृति का विश्लेषण

सभ्यता एवं संस्कृति का विश्लेषण करें तो दोनों में कुछ समानता होते भी मौलिक अन्तर है। सभ्यता क्षेत्रीय होती है, उस पर स्थानीय परिस्थितियों का, वातावरण व वायुमण्डल तथा समय के उतार-चढ़ावों का प्रभाव रहता है किन्तु संस्कृति आत्मा में निहित संस्कारों से सम्बन्धित है। अत: आत्मा की मौलिक विशेषता होने के कारण सनातन व शाश्वत है। समय के साथ उनमें परिवर्तन अवश्य होता है। उतार-चढ़ावों से गुजरती आखिर आधुनिक संस्कृति आध्यात्मिक संस्कृति में बदलेगी और फिर आध्यात्मिक संस्कृति की परिणति होगी – दैवी संस्कृति।

कैसे होगा दैवी संस्कृति का निर्माण?

किन्तु संस्कृति परिवर्तन किसी छूमन्तर से या जादुई छड़ी अथवा नारे-भाषणों से नहीं होती। आचरण की शुद्धता, व्यवहारिक श्रेष्ठता एवं संस्कारों के परिमार्जन व दिव्यीकरण से ही दैवी संस्कृति-निर्माण का पथ प्रशस्त होगा। प्राचीन भारत में जब स्वर्ण युग की संस्कृति थी तब से अब तक के अनेकों चिह्न, अवशेषों में प्राप्त होते हैं। प्राचीन भारतीय दैवी संस्कृति में रामराज्य की छवि थी जहाँ दैहिक-दैविक-भौतिक सुख-सम्पदा-समृद्धि थी। परस्पर स्नेह, समता, दया, क्षमा, परोपकार की भावना थी। परिणामत: सर्वत्र प्रकृति का सतोप्रधान स्वरूप मिलता था। कहीं पर प्राकृतिक आपदाओं का लेश मात्र भी प्रभाव दिखाई नहीं देता था। उसमें वैचारिक, कायिक पवित्रता व ब्रह्मचर्य का तत्व-तेज था जो मानव देवी-देवता के रूप में अमरत्व को प्राप्त हुए। इस अमरत्व का मतलब है कि वहाँ अकाले मृत्यु नहीं हुआ करती थी। दीर्घायु पूर्ण कर सहजता से कायोत्सर्ग करते थे। यह स्थिति आत्म ज्ञान की पराकाष्ठा से उपलब्ध थी।

भारतीय संस्कृति का स्वर्ण काल

अधिक समय पहले नहीं, मध्यकालीन भारत में जब गुप्त वंश का शासन था, इतिहास में उसे स्वर्ण काल कहा जाता है। इतिहासकारों एवं भ्रमणकारी विद्वानों ने लिखा है – उन दिनों सब में सुख-शान्ति-समृद्धि थी। घरों में ताले नहीं लगते थे। व्यापार खूब फला-फूला था। नारी वर्ग का सम्मान था। ऊँच-नीच, अमीरी-गरीबी की खाई नहीं थी। विद्याध्ययन के लिए विदेशों से लोग आते थे भारतवर्ष में। संयुक्त परिवार की व्यवस्था थी। सहिष्णुता, समानता, स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि पर उत्कृष्ट सामाजिक व्यवस्था के दर्शन होते थे। सूक्ष्मता से देखा जाय तो यह भारत-भारती की आत्मा में विराजित आध्यात्किता की महानता थी जिसने मानवीय मूल्यों से समाज को मूल्यनिष्ठ बना रखा था। भारतीय संस्कृति का वह गौरवपूर्ण काल था।

अप संस्कृति से उच्च संस्कृति की ओर

आज जब हम संस्कृति की बात करते हैं तो उसे भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में परिभाषित करते हैं। वास्तव में अन्य संस्कृतियों की तुलना में भारतीय संस्कृति अतुलनीय एवं

सर्वोत्कृष्ट थी। आध्यात्मिकता की आधारशिला पर स्थित इसी विशेषता से अगणित अपसंस्कृतियों की मार को झेलते भी वह अमर व अक्षुण्ण है किन्तु हाँ आज वही भारतीय संस्कृति अपनी मौलिकता व विशेषता को विस्मृत कर चुकी है। भारतीय स्वयं ही अपनी संस्कृति की अवमानना कर रहे हैं। अपसंस्कृति के संवाहक के रूप में सारा समाज ही सिनेमा व दूरदर्शन के चमकीले मोह-पाश में आबद्ध है। एक तो करेला दूजा नीम पर चढ़ा की तर्ज पर विकार ग्रस्त आधुनिक समाज बिल्कुल ही पंगु बन गया है। यद्यपि मृत:प्राय: होते भी उसमें पुनजीर्वित होने की शक्ति है और उसे आध्यात्मिक जीवन मूल्यों की वैशाखी मिल जाय तो उड़ने में भी देर नहीं लगेगी। किन्तु इन मूल्यों का माली हमें स्वयं बनना होगा। आज विश्व नव निर्माण के महाकार्य में स्वयं स्रष्टा ने हम सभी का आह्वान किया है तो हमें अविलम्ब इस महती योजना में शामिल हो जाना चाहिए।

संस्कार परिवर्तन से संसार परिवर्तन

संस्कार परिवर्तन से संसार परिवर्तन की ईश्वरीय योजना है। आज सारा विश्व सुख-शान्ति से जीने व रहने की कामना करता है। हम सभी यह प्रार्थना करते भी हैं, 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:'। सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों, किसी का भी अकल्याण न हो किन्तु मात्र कामना से यह लक्ष्य पूरा नहीं होगा। इसके लिए जब तक संस्कार परिवर्तन नहीं होगा, संस्कारों में श्रेष्ठता व दिव्यता नहीं होगी तो हमारा व्यवहार और संसार कैसे उत्तम होगा!

किन्तु संस्कारों के परिवर्तन की प्रक्रिया बड़ी सूक्ष्म है। संस्कारों का बदलना नामुमकिन तो नहीं है लेकिन मुश्किल अवश्य है। संस्कार हमारे कर्मों की पुनरावृत्ति से बनी हुई आदतों की धनीभूत अवस्था है जिसे बदलने के लिए बड़ी सूक्ष्मता व गहनता से निकृष्ट संस्कारों को विस्मृत करना – यही हमारा लक्ष्य व अभ्यास हो और इस कार्य में व्यय होने वाली अतिरिक्त ऊर्जा ईश्वरीय स्नेह, स्मृति व अनुकम्पा से प्राप्त हो सकती है। आत्मा को शक्तिशाली बनाने, कुसंस्कारों का विग्रह एवं सुसंस्कारों के संग्रह के लिए एकमेव सार्थक मार्ग है राजयोग।

▲▲

पहले कर्म फिर किस्मत

– ब्रह्माकुमारी ममता, पानीपत

किस्मत उन लोगों का साथ देती है जो कुछ करने की लालसा रखते हैं। किस्मत बनाने से बनती है। बिना कुछ किये तो भगवान भी मदद नहीं करता। इसलिये मदद की पुकार करने के बजाए स्वयं को प्रेरित करने की आवश्यकता है। किसी ने ठीक ही कहा है, "भगवान उनकी मदद करते हैं जो स्वयं की स्वयं मदद करते हैं।"कर्म से भाग्य बनता है। हाथ की रेखाएं भी बदल सकती हैं। प्रारब्ध बदल जाती है। चर्चिल ने कहा है–"never-never-never give up" अर्थात् "लगे रहो, सफलता प्राप्त होगी अवश्य।" याद रखें–

बाधाएं कब बांध सकी हैं, आगे बढ़ने वालों को।
विपदाएं कब रोक सकी हैं, पथ पर चलने वालों को।।

पुरुषार्थ करने से ही भाग्य प्राप्त होता है। इसलिये पुरुषार्थ बड़ा माना गया है। बिना किये ना तो किसी को कुछ मिला है ना मिलेगा। एक बार एक राजा ने अपने सलाहकारों को बुलाया और कहा कि पुरातनकाल से लेकर आज तक की ज्ञान की बातें इकट्ठी करके लिखो ताकि वे आने वाली पीढ़ियों को मिल सकें। काफी मेहनत करने के बाद उन सलाहकारों ने कई ग्रन्थ लिख डाले लेकिन राजा सन्तुष्ट नहीं हुआ। वे वापिस गये और एक पन्ने पर कुछ लिख कर लाये लेकिन राजा साहब अभी भी असन्तुष्ट थे। वे एक वाक्य में लिखकर लाए **"दुनिया में मुफ्त कुछ नही मिलता"**, यह देख राजा खुश और सन्तुष्ट हो गया। परमात्मा पिता भी कहते हैं, पहले कर्म फिर किस्मत।

धन से सुख क्यों नहीं मिलता?

–ब्रह्माकुमार विनोद, रानीगंज (पं. बंगाल)

इस संसार में गरीब और असहाय लोग तो समस्याओं से परेशान हैं ही लेकिन धन-संपन्न वर्ग भी कम दु:खी नहीं है। यह सब देखकर प्रश्न उठता है कि जिस धन को लोग लक्ष्मी का स्वरूप अथवा लक्ष्मी का वरदान मानते हैं वह धन उन्हें सुख क्यों नहीं देता। यदि पिता के पास धन है तो उसके पुत्र, उत्तराधिकार को लेकर लड़ते दिखाई देते हैं और वृद्ध पिता का चैन छीनते हैं। धनी व्यवसायी या डॉक्टर आदि के प्रियजनों का अपहरण कर, अपराधी फिरौती में मनमाने धन की माँग करते हैं। लोग यह सोचकर कि अधिक धन उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा और उनके दु:ख दूर करेगा, गलत ढंग से धन संग्रह करना शुरू कर देते हैं परंतु बाद में पकड़े जाते हैं तो सारा कमाया धन स्वयं को मुक्त करने में लग जाता है। कई लोग धन इकट्ठा करने के लिए गलत कर्म करते हैं जिससे लाईलाज बीमारियाँ लग जाती हैं और ईलाज कराने में ही सारी कमाई खत्म हो जाती है। इस संसार में एक ऐसा वर्ग भी है जो सारे संसार को धन की पवित्रता के बारे में उपदेश देता है और स्वयं भी गलत कर्मों से दूर रहने की कोशिश करता है परंतु वह भी निरोगी और समस्यामुक्त नहीं है। उनके पास भी शिष्यों अथवा यजमानों द्वारा धन इकट्ठा होता है और उसमें भी पवित्रता नगण्य होती है।

इन्हीं सब कारणों से शास्त्रों में धन को माया बताया गया है, जबकि माया तो संसार में किया जाने वाला गलत कर्म है। क्योंकि इसी धन से अस्पताल का निर्माण भी होता है, जहाँ रोगियों की चिकित्सा होती है; विद्यालयों का निर्माण होता है जहाँ शिक्षा प्राप्त कर बच्चे अपना भविष्य सुधारते हैं। **अत: धन माया नहीं बल्कि धन को प्राप्त करने के लिए जो गलत तरीका हम प्रयोग में लाते हैं वह माया है। धन को कमाने में हम जितनी मात्रा में पवित्रता अथवा नैतिक मूल्यों का पालन करते हैं उतनी ही मात्रा में हमें उस धन से सुख की प्राप्ति होती है।** इस बात को हम इस कहानी द्वारा भी समझ सकते हैं – एक बार दो ब्राह्मण भाई अपने पोथी-पत्रों को लेकर कमाई करने निकल पड़े। एक दिन दोनों समुद्र के किनारे पहुँचे और मछुआरों की बस्ती में जम गये। वहाँ स्वयं को महाज्योतिषी और तांत्रिक बताकर भोले-भाले मछुआरों को ठगने लगे। कुछ ही दिनों में दोनों भाई मालामाल हो गये। तब दोनों ने घर लौटने का निश्चय किया और ठगी द्वारा प्राप्त मोहरों की थैली को बारी-बारी से ढोने लगे। जिसके हाथ में भी वह थैली आती थी वह यही सोचता कि क्यों न दूसरे को मारकर सारा धन प्राप्त कर लिया जाए। लेकिन इस लोभ पर आपसी प्यार की सदा जीत होती रही।

जब दोनों घर पहुँचने ही वाले थे तो जिसके पास थैली थी उसने दूसरे से कहा कि भय्या, जब-जब यह थैली आती है तो तुम्हें मारकर सारा धन हड़प लेने की इच्छा मेरे मन में उठती है। तुम्हीं इस थैली को रखो, मैं इसे नहीं रखता। दूसरे भाई ने भी अपने मन की हालत कुछ ऐसी ही बताई। अत: दोनों ने मिलकर भातृत्व को नाश करने वाली मोहरों की थैली को घर के सामने कूड़े के गड्ढे में फेंक दिया। कुछ देर बाद उनकी बहन सब्जी का छिलका डालने उस गड्ढे के पास आई तो उसे सोने की मोहरें दिखाई दीं। उसने कुछ मोहरों को जल्दी से अपने पास छिपा लिया। उसे वहाँ देखकर उसकी एक भाभी ने पूछ लिया कि आप क्या कर रही हो ? ननद ने समझा कि भाभी ने सब कुछ देख लिया है इसलिए डर और घबराहट में अपने हाथ में पकड़ी तरकारी काटने की छुरी भाभी को भोंक दी। चीख सुनकर उसका भाई वहाँ आ पहुँचा। भाई को सामने देखकर बहन डर से भागने लगी तो कुछ सोने की मोहरें नीचे गिर पड़ीं। यह देख बहन ने अपमान और सजा के डर से अपने पेट में भी छुरी भोंक कर खुद को समाप्त कर लिया। तब तक दूसरा भाई भी वहाँ आ पहुँचा और बोला – देखो भय्या, फेंक देने पर भी पाप से कमाये गए धन ने कितना अनर्थ कर डाला। दोनों भाई वहीं सिर पकड़ कर रोने लगे। तो देखिए, गलत तरीके से कमाया गया धन न सिर्फ कमाने वाले का बल्कि उसके साथ-साथ अनेकों का नुकसान कर देता है। आइये, हम ईश्वरीय स्मृति में रहकर ही धन कमाएं एवं सदा इस बात का ख्याल रखें कि हमारे धनोपार्जन से किसी को भी कष्ट न हो। तभी वह धन हमें संपूर्ण सुख प्रदान कर सकेगा।

माँगने से मरना भला

–ब्रह्माकुमार विनोद, आबू पर्वत

प्रत्येक व्यक्ति को समय और परिस्थिति के अनुसार कभी न कभी किसी न किसी से कुछ माँगना ही पड़ता है लेकिन किसी के आगे नित्य हाथ फैलाना, स्वार्थपूर्ति हेतु अनुनय-विनय करना या अपेक्षाओं के अनुरूप चलने के लिए विवश करना तो स्वयं को दीन-हीन करना है। यह आलस्य, शिथिलता और अकर्मण्यता सहित संकीर्ण वृत्तियों का परिचायक है। ऐसे व्यक्ति पुरुषार्थी कम, भाग्यवादी अधिक होते हैं और वे समाज में उपेक्षित तथा शर्मसार होते हैं। वे जीवित ही मृततुल्य हैं। इसलिए तो कहते हैं मांगने से मरना भला।

जीवन में किसी से सही मार्गदर्शन, प्रेरणायें, नसीहत लेकर व्यक्ति स्वयं को सुयोग्य बना लेते हैं तथा सामाजिक परिस्थितियों, संक्रमित बीमारियों सहित आने वाली आपदाओं से मुक्ति पा लेते हैं। आज समाज में दु:ख और समस्याओं के साथ शारीरिक-मानसिक व्याधियाँ एवं आर्थिक बदहाली चहुँ ओर है। इससे निवृत्ति हेतु हम अपने चिर परिचित संबंधियों, मित्रों से अधिकारपूर्ण सहयोग की मांग कर सकते हैं। अन्य कोई स्वेच्छा से सहयोग देने में तत्पर है तो उसे आदर सहित स्वीकार कर सकते हैं लेकिन जो प्रतिकूलताओं का दुरुपयोग की वृत्ति से सहयोग करना चाहते हैं तो उन्हें नि:संकोच अस्वीकार कर देना चाहिए। व्यवहारिक धरातल पर ऐसे कठोर निर्णय लेना अनिवार्य भी है क्योंकि सहयोग मांगने की कीमत में यदि आत्म-सम्मान रूपी मानवीय धरोहर का ह्रास होता है तो यह निश्चित ही बुरा है और ऐसी जटिल परिस्थितियों में अत्यंत आवश्यक वस्तु को मांगने से मरना उत्तम है।

वर्तमान परिदृश्य में एक तरफ जहां मांगना व्यवसाय बना हुआ है, भिखारी बनकर एक बड़ा वर्ग अपनी आजीविका कमाने हेतु सर्वत्र भिक्षा मांगता है, वहीं दूसरी तरफ धोखा देकर दूसरे की संपत्ति को हथियाना, रिश्वत लेकर कार्य करना, चालबाज़ी से किसी को विवश करना, कर्मचारियों की हड़ताल, न्याय की गुहार, स्नेह-सम्मान पाने की ललक, विज्ञापन, उपहार, एक वस्तु के साथ दूसरी वस्तु मुफ़्त मिले – ये सब मांगने के सूक्ष्म रूप ही हैं। कुछ मांगें अधिकारपूर्ण प्रदर्शन करके और कुछ बहिष्कार करके भी पूरी करवाई जाती हैं। उपभोक्ता की मांगें अपनी होती हैं और उत्पादक की अपनी। नेता जन-समर्थन मांगते हैं तो जनता की भी अपनी अलग मांगें होती हैं। अब तो यज्ञ-हवन जैसे धार्मिक अनुष्ठान भी कुछ मांगों को लेकर ही आयोजित किए जाते हैं।

आवश्यकतायें पूरी करें किंतु इच्छायें नहीं – जीवन की मौलिक आवश्यकताएँ रोटी,कपड़ा और मकान हैं। इनको व्यक्ति स्वयं परिश्रम से प्राप्त करके स्वाभिमानपूर्वक जीवनयापन कर सकता है। इससे अधिक की आकांक्षा रखकर पुरुषार्थ करना अच्छी बात है किंतु इच्छायें अनन्त होती हैं जो कमाने के साथ-साथ मांगने को भी विवश करती हैं। अधिकांश व्यक्ति तो इच्छाओं को ही आवश्यकता समझ लेते हैं जिसकी पूर्ति हेतु अनावश्यक वस्तुओं को एकत्रित करना, सहारे आदि की सिफारिश करना कदापि अच्छा नहीं है। अच्छा तो यही है कि हम आवश्यकतायें पूरी करने का प्रयत्न करें और इच्छाओं का परित्याग करें।

साधारण रहें, कम खायें और माँगने के बोझ से बचें – सुखी एवं आदर्श जीवन के लिए कहावत है कि जितनी लंबी चादर हो उतना ही पांव फैलाना चाहिए अर्थात् हम अपनी आय के अनुसार ही व्यय करें एवं व्यर्थ खर्च से बचें। दूसरों से तुलना नहीं करें। यह तो कर्म का रहस्य है कि कोई भिखारी बना हुआ है और कोई दान करता है। स्वावलंबी होना सबसे अच्छी बात है। **जहाँ तक हो सके अपनी आवश्यकतायें कम करें, सरलचित्त होकर समस्याओं-आपदाओं को धैर्य से पार करें, कम खायें, साधारण रहें किन्तु मांगने के अतिरिक्त बोझ से अवश्य बचें। चारित्रिक उत्थान द्वारा आत्म सम्मान**

की रक्षा करें - चरित्र सबसे बड़ा धन है। इससे स्थूल धन-धान्य सहित संपूर्ण सुख की प्राप्ति होती है। रामराज्य में सभी चरित्रवान थे इसलिए वहाँ अपार सुख व सम्पत्ति थी। आज चरित्रहीनता ही व्यक्ति की दु:ख-अशांति तथा दरिद्रता का कारण है। इसके लिए आध्यात्मिक सशक्तिकरण करें, चारित्रिक उत्थान हेतु संयमित जीवन जियें। स्वानुशासन में रहें, दैवी गुणों को धारण करें और व्यवहारिक कुशलता से स्वयं को संतुष्ट करें तो धीरे-धीरे जीवन दिव्यता से खिल जाएगा।

कर्ज के मर्ज से बचें – यदि किसी विशेष आवश्यकता हेतु व्यक्ति को ऋण लेना ही है तो ऋण भुगतान व वसूल करने के नियम सरल होने चाहिएँ। किसी कारणवश ऋण धारक समय सीमा के अंदर ऋण नहीं चुका पाता है तो ऋणदाता बैंक, साहूकार (money lender), कंपनी आदि उसकी वसूली की अवधि को बढ़ायें। उसकी समस्या व प्राकृतिक आपदाओं का अवलोकन करें। आर्थिक सहायता प्रदान करें। उदार प्रवृत्ति से वसूल करें अथवा ऋण माफ कर दिया जाये किंतु कभी भी ऋण धारक पर दबाव देकर, हठपूर्वक परेशान करके ऋण वसूली का प्रयत्न न करें अन्यथा ऐसी जटिल परिस्थितियों में व्यक्ति ऋण का बोझ झेल नहीं पाता है और आत्महत्या कर लेता है।

सत्कर्मों का बीज बोयें और श्रेष्ठ प्रालब्ध जमा करें – प्रत्येक व्यक्ति को अपने ही अतीत के कर्मों का फल प्राप्त होता है। जैसी करनी वैसी भरनी। हमारे पास वर्तमान है, अतीत व भविष्य के चिंतन से उपराम हो सत्कर्मों का बीज बोएँ। सबको सुख देने की उत्कंठा रखें, पवित्र प्रकम्पन फैलायें, प्रतिकूलताओं में भी सकारात्मक रहें। सर्व के प्रति सुखदाई, कल्याणकारी दृष्टिकोण रखें। व्यवहारिक धरातल पर आत्मिक वृत्ति अपनायें। गिरे हुए को सहारा देकर ऊंचा उठायें तो पुण्य की पूंजी जमा होती रहेगी और अनन्त सुख मिलेगा।

अपेक्षा न रखें और उपेक्षा न करें – व्यक्ति जहां भी हो, कुछ अपेक्षा रखता है और परिवार समाज में भी उससे कुछ अपेक्षा की जाती है। आप के इर्द-गिर्द पास-पड़ोस में रहने वाले आपसे कुछ चाहते हैं, प्यार-सम्मान, सहयोग-सहकार की उम्मीदें रखते हैं। आपका कर्त्तव्य है कि सर्व की मनोभावनाओं को आदर, सम्मान, स्नेह देने के साथ-साथ अपेक्षित कर्त्तव्यों को भी पूरा करें। उनके उत्थान की नई ज्योति जलाएँ, सहारा बन जायें लेकिन कभी बदले में पद, प्रशंसा, उपहार की अपेक्षा न रखें अन्यथा यह भी मांगने का सूक्ष्म रूप है। इसका परित्याग कर नि:स्वार्थ सेवा करें और कभी दूसरों की भावनाओं की उपेक्षा ना करें। जहां तक हो सके सबकी सेवा, सत्कार करें, यही जीवन जीने की कला है।

सच्ची श्रद्धा में ईश्वरीय अनुकम्पा – यह तो जीवन यात्रा के उतार-चढ़ाव का रहस्य है जो कोई मालामाल है और कोई बेहाल है। किसी को संपूर्ण ऐश्वर्य प्राप्त है तो कोई-कोई को पेट भरने हेतु ईश्वर के नाम पर माँगने से भी नहीं मिलता। जबकि दाता एक ही सर्वशक्तिवान शिव है, सबको वही देता है किंतु जो व्यक्ति उसमें सच्ची श्रद्धा रखते हैं, उसके ही सहारे पर रहते हैं उनकी हर आवश्यकता ईश्वर स्वयं पूरी करता है। उन्हें कभी भी कुछ माँगने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जिनके सत्कर्म एवं सत्यनिष्ठा से ईश्वर राज़ी हो जाये तो उसे वह छप्पड़ फाड़ कर देता है और कारून के खज़ाने का मालिक बना देता है। इसलिए किसी ने ठीक ही कहा है।

बिन मांगे मोती मिले,
मांगे मिले न भीख।
माँगने से मरना भला,
यह सतगुरु की सीख।।

अब अच्छा तो यही है कि हम अपनी हरेक आवश्यकता पूर्ति हेतु स्वपुरुषार्थ करें, आत्मनिर्भर बनें, हीनभावना एवं आलस्य के अशुद्ध विचारों का परित्याग करें, मांगने की वृत्ति न रखें और प्रतिकूलता में भी सहन करने, संतुष्ट रहने की आदत बनायें तथा दातापन की भावना जागृत करें। स्नेह-प्यार, सम्मान, सहयोग सर्वत्र देते जायें तो स्वत: सब कुछ मिलता रहेगा। ▲▲

बदलते परिवेश में राजयोग का महत्त्व

–ब्रह्माकुमार रूपेश, ज्ञान सरोवर (आबू पर्वत)

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। आदिकाल से ही प्रकृति व पुरुष में परिवर्तन होता आया है। परिवर्तन की गति भी उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। पिछले सौ वर्षों में विज्ञान ने संसार का कायाकल्प ही कर दिया है। आज बैलगाड़ी का स्थान हवाईजहाज ने और लालटेन का स्थान जगमगाती ट्यूब लाइट ने ले लिया है किंतु भौतिक विकास की इस दौड़ में हमने जीवन के एक दूसरे महत्त्वपूर्ण पक्ष, नैतिकता व आध्यात्मिकता को भुला दिया है। जिसके कारण समाज दिनों-दिन पतन की ओर अग्रसर होता जा रहा है। ऐसे में राजयोग ही एक ऐसा प्रकाश-स्तंभ है जो पतनगामी समाज का उद्धार कर उसे पुनः गरिमामय स्थिति प्रदान कर सकता है।

क्या है राजयोग ? राजयोग एक सकारात्मक जीवन पद्धति है जो मानव को देवत्व की ओर ले जाती है तथा उसके दैवी एवं आत्मिक गुणों का विकास करती है। मनुष्यात्मा का मूल स्वभाव प्रेम, दया, शांति, सुख और पवित्रता है। इनकी चाहना सदा उसके मन में बनी रहती है। राजयोग मानव को इन गुणों की खान बना देता है। यह हमें जीवन के प्रति सही दृष्टिकोण प्रदान करता है जिससे जीवन की अनेक समस्याएँ व उलझनें समाप्त हो जाती हैं और व्यक्ति लौकिक कार्य-व्यवहार करते भी सुख-शांतिमय जीवन जन्मसिद्ध अधिकार के रूप में प्राप्त करता है। राजयोग हमें असत्य से सत्य, अंधकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरता की ओर चलने की प्रेरणा व शक्ति प्रदान करता है। वर्तमान मृतप्राय: समाज के लिए राजयोग एक संजीवनी है। चरमराती व्यवस्थाओं व आस्थाओं के लिए एक दृढ़ सम्बल है।

एक समय था जब संसार एक था। मानव हृदय एक थे। आपस में स्नेह, भाईचारा और सहयोग की भावना थी। प्रेम व सद्भावना की निर्मल सरिता हर गली में बहती थी। हिंसा, अपराध, चोरी का नामोनिशान नहीं था। बुराइयों की जैसे अविद्या थी। सभी संतुष्ट थे, खुश थे, स्थूल तथा सूक्ष्म रूप से भरपूर थे परंतु आज स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत हो गई है। अब सज्जन व्यक्ति ढूँढने पर भी नहीं मिलते। चारों ओर चोरी-पाप-झूठ का ही बोलबाला है। सत्य बोलने वाले को मूर्ख समझा जाता है। ईमान के पथ पर चलने वालों को पागल कहा जाता है। आज ईमान और धर्म की परिभाषा कुछ और है। नैतिकता व आध्यात्मिकता दूर एक
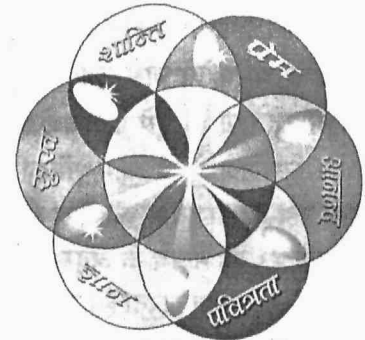
कोने पर बैठे विलाप कर रहे हैं। हाय, मानवता की यह कैसी दुर्दशा है!!!

आज रुपया ही मनुष्य का धर्म, ईमान और देवता बन गया है। सभी येन-केन-प्रकारेण धन के संग्रह में जुटे हुए हैं। यह मानव की धन-लोलुपता ही है जिसके कारण चोरी, झूठ, ठगी, मिलावट-बनावट और भ्रष्टाचार अस्तित्व में आए हैं। राजयोग हमें जीवन में संतुष्टता सिखाता है। जीवन को महानता की ओर ले जाता है। धन-संग्रह जीवन का अंतिम लक्ष्य नहीं है। वास्तव में व्यक्ति को चाहिए कितना ? केवल दो रोटी और अंत में तीन पैर पृथ्वी ही ना। लेकिन अज्ञानतावश मानव औरों के पेट काट-काटकर अपनी पेटियाँ भरता रहता है। राजयोग से जीवन सच्चे ज्ञान से आलोकित हो उठता है और तब वह पशुओं की तरह औरों के निवाले छीनना छोड़कर स्वयं के निवाले को भी मिल बाँटकर खाने लगता है। चारित्रिक पतन आज के समाज की

एक दूसरी ज्वलंत समस्या है। आए दिन छेड़छाड़, अपहरण व बलात्कार जैसे घिनौने समाचार सुनने को मिलते हैं। श्रेष्ठ चरित्र तो जैसे स्वप्न ही बनकर रह गया है। **ऐसे में राजयोग चरित्र-निर्माण में अपनी अहम भूमिका निभा रहा है। राजयोग की नींव ही पवित्रता है। यह मानव के अंदर की मानवता को जागृत करता है। उसके आदि-अनादि पवित्र स्वरूप की स्मृति दिलाता है जिससे मनुष्य पशु-तुल्य कामुकता से ऊपर उठकर दिव्यता की ओर बढ़ने लगता है।**

राजयोग इस वेद-मंत्र की पुनः प्रतिष्ठा कर रहा है कि "**यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।**" सदियों से नारी जाति उत्पीड़न का शिकार होती आयी है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत उसे उपेक्षा का शिकार होना पड़ा है। यह कैसी विडंबना है कि एक ओर तो हम हर क्षेत्र में विकास का ध्वज लहराते हुए 21वीं सदी में प्रवेश कर गए हैं लेकिन आज भी नारियों के प्रति अपनी संकीर्ण मानसिकता को नहीं छोड़ पाए हैं। **राजयोग मानव हृदय में हर नारी के प्रति जगतमाता एवं शिवशक्ति रूप का सम्मान पैदा करता है।** उनकी दृष्टि में समत्व भाव पैदा करता है। नारियों के प्रति इस श्रेष्ठ दृष्टिकोण से युगों से चला आ रहा 'नारी उत्पीड़न' 'नारी उत्थान' में परिवर्तित होता जा रहा है।

अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है। इस विशेषता को अक्षुण्ण बनाए रखने में राजयोग अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है। राजयोग सबको यह सत्य **ज्ञान दे रहा है कि देह के धर्म व जाति भले ही भिन्न-भिन्न हैं लेकिन आत्मिक** नाते से हम सब भाई-भाई हैं और **एक पिता परमात्मा की संतान हैं।** इस आत्मज्ञान के आधार पर धर्मवाद, क्षेत्रवाद व भाषावाद के वाद-विवाद की इति हो रही है। यह राजयोग का ही प्रताप है जो इसने अपने निर्मल **स्नेह-सूत्र में देश-विदेश के भिन्न-भिन्न जाति, धर्म, भाषा, सभ्यता एवं संस्कृति के आठ लाख लोगों को पवित्र राजयोगी बनाकर बाँध लिया है वा एक कर दिया है।** सही मायने में राजयोग 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को पुनः धरा पर साकार कर रहा है।

युवा राष्ट्र की सच्ची संपत्ति हैं। युवा वर्ग ही राष्ट्र के विकास को सर्वोच्च शिखर पर ले जाता है तो पतन के गर्त में भी। आज सही दिशा-निर्देश के अभाव में युवा अपनी शक्तियों का दुरुपयोग हिंसा व हड़ताल आदि में कर रहा है। वह नशीली दवाओं का सेवन कर असामाजिक गतिविधियों – जैसे कि छेड़छाड़, मारपीट आदि में लिप्त होता जा रहा है। घोर अंधकार में डूबते युवा को आज कौन सहारा देने वाला है? राजयोग वह आशा का दीप है जो युवाओं की शक्ति को सकारात्मक दिशा प्रदान कर रहा है। **राजयोग के अभ्यास से युवाओं में दृढ़ता व आत्मविश्वास का विकास होता है जिससे वे बुराइयों का सामना करते हुए सत्य पथ पर अविचल हो आगे बढ़ते हैं। राजयोग के अभ्यास से आज विश्व के 80,000 युवाओं ने स्वयं को निर्व्यसनी, अनुशासित व संयमी बनाया है तथा समाज से बुराइयों को उखाड़कर एक नवीन विश्व के निर्माण कार्य में सतत् लगे हुए हैं।**

वर्तमान समाज की दुर्दशा का हम कहाँ तक वर्णन करें। आज घर-घर में महाभारत चल रहा है। गरीबी, बेरोज़गारी व पीढ़ी अंतराल के कारण घरों में मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन व संघर्ष बढ़ता जा रहा है। ऐसा लगता है कि आने वाले समय में सारा संसार ही मानसिक रोगों का घर बन जाएगा। आज की राजनीति भी स्वार्थ, छल-कपट व दूषित भावनाओं पर आधारित है। एक दल दूसरे दल को, एक देश दूसरे देश को नीचा दिखाने में लगा हुआ है। अस्त्र-शस्त्रों की होड़ लगी हुई है। जनता का पेट काटकर धन को सुरक्षा साधनों में लगाया जा रहा

है। भय व चिंता ने सबकी रात की नींद व दिन का चैन छीन लिया है। ये सभी समस्याएँ दिनों-दिन सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती जा रही हैं। अब विश्व के सभी विचारक और विद्वानजन ऐसा महसूस करने लगे हैं कि इनका निदान मनुष्य के बस से बाहर है। वे लंबे काल से प्रयास करते रहे लेकिन 'ज्यों-ज्यों दवा की, मर्ज़ बढ़ता ही गया' वाली कहावत चरितार्थ हुई। इन समस्याओं का उन्मूलन और एक स्वच्छ-सुखमय संसार की स्थापना तो स्वयं जगतपिता ही कर सकते हैं।

हमें आपको यह बताते हुए अति हर्ष हो रहा है कि वर्तमान समय सृष्टि के नियंता स्वयं परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के माध्यम से 9 सहज राजयोग" सिखा रहे हैं जिसकी वर्तमान समाज में उपयोगिता का हम ऊपर वर्णन कर आए हैं। इस राजयोग में ही सर्व समस्याओं का समाधान समाहित है। यह विश्व को प्रभु-पिता का अनुपम उपहार है। आज के बदलते परिवेश में यह जन-जन को बुराई से अच्छाई व नर्क से स्वर्ग की ओर ले जाने वाला एक दिव्य पथ है। आइये, इस श्रेष्ठ पथ पर चलकर हम स्वयं को, समाज को व संसार को सुख, शांति व संपत्ति संपन्न बनायें।

★★

याद की यात्रा

ब्रह्माकुमार देवनारायण मिश्र, महेन्द्र नगर, नेपाल

प्यार से हर आत्मा पल रही है,
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है।
कौन है जो ब्रह्म से आया धरा पर?
यज्ञ यह किसने रचाया है यहाँ पर?
यह उसी की दृष्टि की जादूगरी है –
हो रही हर आत्मा उस पे निछावर,
विघ्न-बाधा आ रही है, टल रही है।
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है....
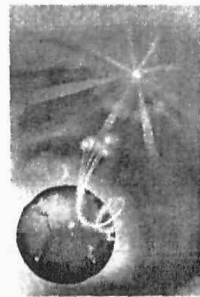
यह समय संगमयुगी पुरुषार्थ का है,
इक नये युग की नयी बुनियाद का है।
हलचलों के बीच आगे बढ़ रहा है –
यह समय परमात्मा की याद का है,
आँधियों में भी सदा अविरल रही है।
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है ....

एक ही संकल्प, एक परिवार है,
एक बाबा, एक ही संसार है।
हर कोई उड़ती कला में उड़ रहा है –
अब नहीं इस पार या उस पार है,
पालना दैवी सभी को मिल रही है।
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है ....

हम युगों से आ रहे हैं, जा रहे हैं,
एक नाटक है, वही दुहरा रहे हैं।
शिवपिता भी दिव्य कर्मों से बँधे हैं –
विश्व-परिवर्तन अभी करवा रहे हैं,
योग की अग्नि अहर्निश जल रही है।
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है ....

पल, घड़ी, दिन, मास बीते, साल बीते,
दिन अभी तक ये बड़े खुशहाल बीते,
अब नये युग का सवेरा देखना है –
कलियुग-सतयुग सन्धिकाल बीते,
आस्था अब हर हृदय की फल रही है।
याद की यात्रा निरन्तर चल रही है ....

संगठन बिखेर देती है उपेक्षा

–ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस

कितने ही राजाओं और सत्ताओं का पतन केवल इसलिए हो गया कि वे लोगों से केवल अपनी प्रशंसा सुनने के आदी हो गये और राज्यहित की उपेक्षा कर केवल धनप्रेमी चापलूसों, चारणों, भाटों और कवियों से घिरे रहे। प्रशंसा न करने वालों तथा गलत कार्यों की निन्दा करने वालों की उपेक्षा करते रहे, सजा देते रहे और कभी-कभी सर कलम तक करते रहे। इस दुनिया में विरला ही कोई होगा जिसे अपनी और अपनों की प्रशंसा सुनने में प्रसन्नता न होती हो।

प्रशंसा, प्रशंसनीय है – जहाँ आवश्यकता है वहाँ प्रशंसा करने में कंजूसी नहीं करनी चाहिए बशर्तेकि प्रशंसा चापलूसी का रूप न ले ले। कितने ही ऐसे संत और कवि रहे जिन्होंने अपने समय के राजाओं की प्रशंसा में गाने और कविता सुनाने से साफ मना कर दिया था। सहयोग देने वाले धन्यवाद और प्रशंसा के पात्र होते ही हैं। बहुत छोटी-सी बात है, किसी ने अच्छा भोजन बनाकर खिलाया उस समय उसकी प्रशंसा उसे अधिक स्नेही तथा अधिक अच्छा करने के लिए प्रोत्साहित कर देती है। अन्य लोगों के सामने किसी एक की प्रशंसा और उसकी तुलना में दूसरे की बुराई, दूसरे को कमज़ोर बना देती है। किसी योग्य व्यक्ति की लगातार उपेक्षा और कम योग्य की लगातार प्रशंसा, प्रथम को कुंठित कर देती है। ऐसी स्थिति में वह श्रेष्ठ व्यक्ति टूट जाता है या फिर भाग्यवादी बन जाता है। **जो हमारी हाँ में हाँ मिला रहा है, चाहे हमारी बात ठीक है या नहीं, हम उसे हितकारी और विश्वासपात्र समझ रहे हैं और जो मित्रभाव से, भलाई के लिए हमारी कमियों को बता रहा है या गलती की ओर ध्यान खिंचवा रहा है, हम उसे मुसीबत हुसैन समझ रहे हैं तो यह सरासर धोखा खा रहे हैं।**

अत: हमें न तो शास्त्र वर्णित धृतराष्ट्र बनना है जो पुत्र मोह में सत्य से आँखें बंद करता रहा और न ही गांधारी बनना है जो पति मोह के कारण आँखों पर पट्टी बाँधे रही और मोहवश पुत्र दुर्योधन को आँखें खोलकर शक्ति प्रदान करती रही। न हमें भीष्म की तरह लाचार होना है जो कौरवों का नमक खाने के कारण सही बात को भी सही कहने की हिम्मत न जुटा सके और मरते दम तक भी अत्याचारी कौरवों का साथ देते रहे। न ही हमें ऐसे चारण और भाट बनना है जो अपनी झोली भरने के लिए केवल प्रशंसा में कविता सुनाते रहे। प्रशंसा यदि स्वमान दिलाने के लिए हो तब तो सोने पे सुहागा है। जैसे ब्रह्मा बाबा हों या शिव बाबा, दोनों ही मिलकर जीवात्माओं को भिन्न-भिन्न स्वमान देकर ऊँचा उठाते हैं। साधारण-सी दिखने वाली मनुष्यात्माओं को देवात्मा बनने का स्वमान देकर महान बनाते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार जैसे महावैरी शत्रुओं, जिनसे ऋषि-मुनि तक चक्करघिन्नी खाते दिखाई दिये, को जीतने के लिए मनोबल बढ़ाते हैं। इन स्वमानों की स्मृति और अभ्यास ने छोटे-छोटे बच्चों और चलने-फिरने में अक्षम वृद्धों को भी ऊँचा उठा दिया। परंतु आत्मप्रशंसा तो अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना है। **किसी की भलाई और उत्थान के लिए अपने किसी विशेष गुण या सेवा का वर्णन करना एक अलग बात है परंतु निरंतर अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना अच्छी बात नहीं। मैंने यह किया, मैंने वह किया, मैं यह हूँ, मेरे में ये योग्यतायें हैं, यह मैं-पन कभी-कभी**

सूक्ष्म अभिमान का रूप ले लेता है। इसके कारण बहुत जल्दी बिखराव और टकराव की स्थिति पैदा हो जाती है।

योग्य को उचित सम्मान और स्थान दें – यह यज्ञ ईश्वर की देन है। यह आत्माओं का नहीं, परमात्मा का है। किसी अन्य की ओर देखने से अच्छा है कि केवल परमात्मा की ओर देखा जाये और निर्मोही बना जाये। कोई रहे या न रहे, यह यज्ञ तो चलता आया है और चलता रहेगा। किसी के आने या न आने से यज्ञ कार्य रुकेंगे नहीं। कोई यह न समझे कि हम ही यज्ञ चला रहे हैं। कार्बन का अति स्वच्छ, ठोस स्वरूप होता है हीरा, जिसे बनने में वर्षों लगते हैं। परंतु कई बार हम योग्यताओं की उपेक्षा करके अपने सूक्ष्म अभिमान के कारण, कम योग्य को योग्य बनाने में, कोयले को हीरा बनाने में तत्पर हो जाते हैं। जो योग्यता पहले से ही हीरे के समान हमारे पास थी उसकी उपेक्षा कर देते हैं। इससे संगठन दरकने लगता है और हीरे-मोतियों की माला टूट जाती है और मनके बिखरने लगते हैं। ब्रह्मा बाबा ने भी बच्चों को त्याग-तपस्या और सेवा, ज्ञान-गुणों और शक्तियों से 14 वर्षों तक भरपूर किया। हालांकि अब 14 वर्ष जितना समय नहीं रहा। लेकिन फिर भी पहले योग्य बनाइये फिर आगे कीजिए।

निराश न हों यदि उपेक्षा की जा रही हो – जब बहुत अधिक किसी से अपेक्षायें कर ली जाती हैं और वे पूर्ण नहीं हो पाती हैं तो भी उपेक्षा की अनुभूति होती है। यदि हमें ऐसा महसूस हो रहा है कि हम योग्य हैं और अयोग्य को सीट, सम्मान और अवसर मिल रहे हैं, काम हम कर रहे हैं और श्रेय कोई और ले रहा है, हमारी तरफ कोई देखता नहीं, कोई बात भी नहीं करता है तो भी निराश न हों। कई लोग कहते हैं कि क्या कमाल की बात है जो घोड़ों को तो घास भी नहीं है और गधे पंजीरी खा रहे हैं। **परंतु याद रहे कि योग्यता कहीं छिपती नहीं है।** यदि हम योग्य हैं तो विचार करें कि क्या कभी गुदड़ी में लाल (रत्न) छिप सकते हैं? आखिर धुंध या कोहरे से सूरज बाहर निकल ही आता है। अत: हे मन, तू यह सोच कि कबाड़ के भी दिन फिरते हैं। धन की कमी होने से हरेन्द्र सिंह, 'हरिया' कहकर उपेक्षित तो किये जा सकते हैं परन्तु सचमुच का हरिया (तोता) तो नहीं हो जाते। कहा गया है कि धन, रूप और पद, कमियों को ढककर, प्रशंसनीय और योग्य बना देते हैं। अगर धन, रूप, पद ही आज के संसार में योग्यता के मापदण्ड हैं तो भी निराश होने की ज़रूरत नहीं क्योंकि ये तीनों ही स्थाई नहीं हैं। स्वयं का निष्पक्ष आत्मनिरीक्षण करके भी देख लेना चाहिए कि मेरी किस कमी के कारण मुझे उपेक्षित किया जा रहा है। यदि मेरे अंदर ही कोई कमी है तो उसे भरने का यथासंभव प्रयास करना चाहिए। सभी को यथायोग्य आदर देते चलें और निरहंकारी बनकर रहें। अधिक अपेक्षा न रखें तो उपेक्षा रूपी ग्रहण से ग्रसित होने से बच जायेंगे। समय और कर्मों की गति ऐसी है जो सच्चाई को अन्तत: उजागर कर ही देती है।

निष्कर्ष यही है कि किसी की भी उपेक्षा करना उचित नहीं है। हर आत्मा का इस सृष्टि रंगमंच पर एक विशिष्ट पार्ट है। किसी के भी पार्ट को कम करके नहीं देखा जा सकता। अगर सभी सफाईकर्मी सप्ताह भर के लिए हड़ताल पर चले जायें तो इस संसार की क्या हालत हो जायेगी? जहाँ सूई काम में आने वाली है वहाँ तेज धार वाली तलवार भी क्या करेगी। किसी एक व्यक्ति और वस्तु से संगठन नहीं बनता। यदि संगठन को बचाना है तो किसी की भी उपेक्षा उचित नहीं। **संगठनमेव जयते।**

▲▲

आत्मचिंतन : क्या, क्यों और कैसे?

–ब्रह्माकुमार संजय, मुजफ्फरपुर

किसी प्रसिद्ध विचारक ने कहा है कि 'मैं कौन हूँ', इस प्रश्न के तीन उत्तर हैं – पहला, 'मैं' वो हूँ जो लोग मेरे विषय में सोचते हैं। दूसरा, 'मैं' वो हूँ जो मैं खुद अपने बारे में सोचता हूँ। तीसरा, 'मैं' वो हूँ जो मेरा असली स्वरूप है। आज दुनिया के अधिकतर लोग अपने को उपरोक्त पहले और दूसरे उत्तर के अनुरूप ही जानते हैं लेकिन ये दोनों उत्तर समयानुसार परिवर्तनशील हैं इसलिए हमारी खुद की पहचान (Self Identity) भी प्रभावित होती रहती है। हम अपनी अस्थाई पहचान (Temporary Identity) को ही असली मानते हुए सारे कर्म करते हैं जिसके कारण हम अपने असली स्वरूप (Real Identity) से सदैव दूर ही रहते हैं। जो मनुष्य इस बात को समझ लेता है वह सत्य स्वरूप को पहचानने में जुट जाता है। यहीं से आत्मचिंतन की प्रक्रिया शुरू होती है।

आत्मचिंतन क्या है?

आत्मचिंतन मन-बुद्धि के द्वारा किये जाने वाले उस चिंतन को कहते हैं जिसके द्वारा आत्मा शरीर में रहते हुए अपने मूल स्वरूप का अनुभव कर सकती है। द्वापर युग से लेकर आज तक दुनिया में कई धर्मस्थापक, पैगम्बर, मनीषियों, विचारकों एवं दार्शनिकों ने आत्मा के मूल स्वरूप को जानने की कोशिश की। कइयों ने यह निष्कर्ष निकाला कि आत्मा शरीर से अलग एक सत्ता है, अभौतिक है परंतु फिर परमात्मा का सही स्वरूप न जानने के कारण आत्मा को ही परमात्मा कह दिया अथवा हरेक में एक ही आत्मा का वास होना (Universal Spirit) बता दिया। इस कारण आत्मचिंतन करते हुए भी वे दिग्भ्रमित हो गए। अगर हरेक में एक ही आत्मा का वास है, फिर सभी के विचार अलग-अलग क्यों होने चाहिएँ? इसका जवाब यह दिया जाता है कि यह माया के कारण है लेकिन आत्मा एक है तो फिर माया भी तो एक ही है। वास्तव में सत्यता यह है कि हर आत्मा अलग है और सर्व आत्माओं का पिता एक परमात्मा है। यह ज्ञान कलियुग के अंतिम चरण में परमपिता परमात्मा शिव स्वयं आकर हमें देते हैं। उन्होंने हमें आत्मा के असली स्वरूप, देश, काल, गुण, धाम सभी का विस्तृत ज्ञान दिया है जिसके आधार पर आत्मचिंतन करने की सही दिशा हमें मिली है।

क्यों करें आत्मचिंतन?

यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। कई लोग ऐसा कहते हैं कि रोजी-रोटी की चिंता में हमारा सारा समय चला जाता है फिर हम आत्मा-परमात्मा को लेकर क्या बैठेंगे? आज दौड़-भाग के जीवन में हरेक के पास समय का अभाव होता है। आज मनुष्य वही कार्य करना चाहता है जिससे उसे तत्काल लाभ (Instant Benefit) हो। इस प्रवृत्ति से यह नुकसान हुआ है कि वह अपनी उन अच्छी आदतों को छोड़ता जा रहा है जिनसे उसे दीर्घकालिक फायदा होता है। मसलन समय की बचत के उद्देश्य से आज मनुष्य पैदल चलना नहीं चाहता है अथवा भोजन बनाने की अपेक्षा बाजार से मँगा कर खा लेता है। इससे उसका समय की बचत का तात्कालिक उद्देश्य तो सिद्ध हो जाता है लेकिन ऐसी आदतों से शरीर पर नकारात्मक असर होता है, इस बात को कौन नहीं जानता? ठीक उसी प्रकार आत्मचिंतन के द्वारा मन-बुद्धि की कसरत हो जाती है जिससे हमें निम्न दीर्घकालिक (Long Term) एवं अल्पकालिक (Short Term)

फायदे होते हैं – 1. आत्मचिंतक, आत्मा के निजी गुण यथा – प्रेम, शांति, पवित्रता एवं शक्तियों का रस लेता रहता है। अतएव वह सदा इन गुणों से परिपूर्ण रहता है। 2. उसकी मन-बुद्धि उसके नियंत्रण में रहती है। वह आत्मविश्वास से परिपूर्ण रहता है। उसकी सूक्ष्म एवं स्थूल कर्मेन्द्रियाँ उसे धोखा देकर दुनिया की ओर आकर्षित नहीं कर सकती। 3. वह अंतर्मुखी रहता है। बाहरी जगत के वायुमंडल का असर उस पर नहीं के बराबर होता है। 4. वह सदा जागरूक रहता है। किसी भी विपरीत परिस्थिति का सामना वह प्रभावी ढंग से कर सकता है। 5. मन-बुद्धि सदा हल्के होने के कारण उसके द्वारा किये जाने वाले कार्य उत्तम होते हैं। इस कारण वह सदा सफलता के नजदीक रहता है।

आत्मचिंतन की सहज विधि

आत्मचिंतन अथवा आत्मिक स्मृति में टिकने की विधि वास्तव में बहुत सरल है। और वह है 'करनहार' तथा 'करावनहार' इनके अंतर की पहचान एवं स्मृति। यह शरीर एवं इसकी कर्मेन्द्रियाँ कर्म करने के लिए निमित्त हैं लेकिन इनके द्वारा कार्य कराने वाली 'मैं' आत्मा हूँ अर्थात् यह शरीर करनहार है और 'मैं आत्मा' करावनहार हूँ। ऐसी स्मृति में रहने से कर्म करते हुए भी हमारा ध्यान स्वयं अर्थात् आत्मा पर रहेगा और हम चलते-फिरते, उठते-बैठते भी आत्मिक स्मृति में रह पाएँगे। लेकिन इतना ही काफी नहीं है। कई बार आत्मस्वरूप की स्मृति होते हुए भी हम कुछ भूलें कर सकते हैं क्योंकि आत्मा में इतनी शक्ति नहीं होती। इसके लिए हमें 'श्रीमत' अर्थात् परमपिता परमात्मा के ज्ञान का स्मरण चाहिए जो कठिन परिस्थितियों में हमारा मार्गदर्शन कर सके। हमें यह स्मरण करना चाहिए कि मैं आत्मा 'करनहार' हूँ तथा परमपिता परमात्मा 'करावनहार' हैं अर्थात् स्वयं को परमपिता के इशारे पर चलने वाले सपूत बच्चे समझें तो सारी ज़िम्मेवारी उसकी हो जायेगी और हम निरंतर आत्मस्थिति में रह पाएँगे।

आत्मचिंतन के लिए सावधानी एवं परहेज

यूँ तो स्व का चिंतन करना वास्तव में सबसे सहज एवं सरल चिंतन होना चाहिए था परंतु आत्मा के अंदर द्वापर काल से जो परचिंतन, परदर्शन तथा परमत का संस्कार पड़ गया है उसके कारण यह सहज कार्य भी आज दु:साध्य हो गया है। इस कारण ही आत्मा विकारों में गिर कर दु:खी, कमजोर, पतित तथा स्वरूप विस्मृत हो गई है। हम सहज आत्मचिंतन कर सकें इसके लिए निम्न सावधानियाँ अथवा परहेज रखने होंगे –

1. बाह्यमुखता – आत्मा पाँच कर्मेन्द्रियों के माध्यम से बाह्य जगत से जुड़ी हुई है। बाह्य जगत की जानकारी आज हरेक आत्मा की आवश्यकता है। लेकिन जब आत्मा हर समय इन कर्मेन्द्रियों के द्वारा बाह्य जगत से जुड़ी रहना चाहे अथवा विश्राम की अवस्था में भी बाह्य जगत के व्यक्ति, वस्तु अथवा वैभव का चिंतन ही उसके मन, बुद्धि में चलता रहे तब इस स्थिति को बाह्यमुखता कहा जाता है। यह भी एक प्रकार की दासता (बंधन) है। इससे परमधाम निवासी आत्मा, इंद्रियों के रस में लिप्त होकर अपने मूल गुणों से दूर चली जाती है। इसलिए आत्मचिंतक को बाह्यमुखता पर नियंत्रण करना है। व्यर्थ व अधिक बोलना, व्यर्थ सुनना, व्यर्थ शारीरिक हरकतें करना अथवा चंचलता, इनसे दूर रहना है। वह उतना ही बोले, देखे अथवा सुने जिससे उसका कार्य न रुकता हो। बाह्य जगत के रसों में अत्यधिक लीन होने से आत्मा की शक्ति क्षीण हो जाती है।

2. आलस्य एवं अलबेलापन – आत्मचिंतक को सदा जागरूक (Alert) रहने की आवश्यकता होती है तभी वह वायुमण्डल के प्रभाव से स्वयं को सुरक्षित रख सकता है। आलस्य विकारों में सहायक है। यह

विकारों को उत्पन्न करने का रास्ता तैयार करता है। मसलन, यदि हमने आलस्यवश अमृतवेले उठकर योगाभ्यास नहीं किया और निद्रा के प्रभाव में रहे तो वह समय दूर नहीं जब उसके आदी हो जाएँगे। पुन: योग का वास्तविक आनंद प्राप्त करने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ेगी। इसी प्रकार अलबेलापन अर्थात् लापरवाही अथवा ज़रूरी बातों पर ध्यान न देना – यह भी आत्मचिंतक के लिए बड़ा विघ्न है। मान लीजिए कि हमारे अंदर कोई सूक्ष्म कमी है जिसके लिए हमें मुरली से अथवा निमित्त आत्माओं से या फिर सेवासाथियों से इशारा मिलता है, तो हमें फौरन उस कमी को मिटाने में लग जाना चाहिए। अगर हमने उसे मिटाने का अभ्यास न किया तो वह कमज़ोरी हमारा स्वभाव बन जाएगी। फिर उसे मिटाना बहुत कठिन कार्य होगा।

3. गरिष्ठ भोजन – अन्न का असर मन पर पड़ता है। अतएव आत्म-चिंतक बहुत मसालेदार, तेलयुक्त, बासी, मादक एवं तामसिक भोजन का त्याग करे।

4. लौकिकता का विस्तार – दुनिया में लोग कहते हैं कि जो कुछ इस जीवन में हमने पाया है, जो भी हमने इकट्ठा किया है सब यहीं छोड़कर जाना होगा। कुछ भी साथ नहीं जाता है लेकिन ईश्वरीय ज्ञान में आकर हमें पता पड़ा कि ज्ञान-धन के द्वारा श्रेष्ठ कर्मों एवं श्रेष्ठ संस्कारों की कमाई को हम ले जाते हैं। तो ज्ञानी बनने के बाद हमारी यह ज़िम्मेवारी बनती है कि हम लौकिक एवं अलौकिक कमाई दोनों का संतुलन रखें। लौकिक कारोबार को हम उतना ही फैलायें जिससे हमारी अलौकिक कमाई में घाटा न पड़े। अगर हम धन अथवा शोहरत कमाने में दिन-रात लग जाते हैं तो स्वाभाविक है कि हमारी सारी शक्ति वहीं खर्च हो जाएगी, फिर हम आत्मचिंतन के लिए अवसर कब निकालेंगे। मोटे तौर पर हमें इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि कोई भी काम हम करें लेकिन वह हमारा अमृतवेला, मुरली क्लास तथा संध्या योगाभ्यास न छुड़ा दे।

5. प्रतिस्पर्धा एवं अत्यधिक महत्त्वाकांक्षा – आत्मचिंतक का मूल लक्ष्य है नित आत्मा के मूल गुणों में स्थित रहना। इसके लिए सबसे प्रिय कार्य है अपनी पावरफुल वृत्ति से वायुमण्डल बनाना। अगर वह किसी से प्रतिस्पर्धा करता है तो वह फिर सहयोग नहीं कर सकता है। इसी प्रकार बहुत महत्वाकांक्षा रखने से हम अपने मूल लक्ष्य से विचलित हो सकते हैं।

6. संगदोष – ऐसा देखा गया है कि किसी गलत आदत की लत, एक व्यक्ति को अपने दोस्तों द्वारा अथवा मीडिया के साधन जैसे – टी.वी., अखबार के द्वारा लग जाती है। यूँ तो कोई भी आदमी अकेला एवं साधनों के बिना नहीं रह सकता लेकिन जरूरत है संग से सम्भाल करने की। हमें उन लोगों का संग करना है जिनसे हमें अच्छी प्रेरणायें मिलती हैं। शेष लोगों से हम मिलें जरूर लेकिन उनकी सेवा के उद्देश्य से, न कि उनके गलत प्रभाव में आने के लिए। उसी प्रकार टी.वी. एवं समाचार-पत्र इत्यादि का भी हम आवश्यकतानुसार प्रयोग करें पर उन्हें अपना मित्र न बना लें कि घंटों उनके साथ बिताना पड़े।

7. हँसी-मजाक – योगी जीवन नीरस जीवन नहीं है। ज्ञानी अगर हँसी की कोई बात भी सुनाएगा तो उसमें कहीं न कहीं ज्ञान की कोई बात छिपी होगी। वह रमणीक अर्थात् रुचिकर बात कहेगा लेकिन असभ्य अथवा बेढ़ंग की कोई बात नहीं कहेगा। हँसी भी वह मर्यादा की लकीर में रहकर ही करेगा। मजाक की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

उपरोक्त सावधानियाँ एवं परहेज का ध्यान रखने से हम सही मायने में आत्मचिंतन करते हुए योगी जीवन का आनंद प्राप्त कर सकते हैं।

एड्स की रोकथाम के कुछ उपाय

–ब्रह्माकुमार विशाल जैन, अकोला

भारत एक अध्यात्म प्रधान देश है। यहाँ निर्विकारी देवताओं का राज्य था। ऋषि-मुनियों की पवित्रता ने धर्म को बल दिया था परंतु आज यह देश एड्स जैसी शर्मनाक बीमारी का सामना कर रहा है। दिन-ब-दिन बढ़ती एड्स रोगियों की संख्या से सरकार का चिंतित होना स्वाभाविक है। साहित्य, संचार माध्यमों द्वारा सरकार करोड़ों रुपये खर्च करके अपने संदेश प्रसारित करती रहती है लेकिन मेरे विचार में कुछेक बातों पर सरकार और बड़े-बड़े चिंतकों का ध्यान न होना आश्चर्य की बात है।

अश्लीलता का प्रदर्शन रोकें – फिल्मों, विज्ञापनों, संचार-माध्यमों और साहित्य आदि के द्वारा बड़ी मात्रा में अश्लीलता का प्रदर्शन हो रहा है जिसके कारण मनुष्य के मन और चरित्र पर आघात हो रहा है। यह ऐसे ही है कि जैसे कोई व्यक्ति धक्का देकर दूसरे को गिरा देता है। जो व्यक्ति धक्का दे रहा है उसे आप 'फ़िल्म फेयर अवार्ड (Film Fare Award)' आदि से सम्मानित किए जा रहे हैं और जो बेचारा गिर रहा है उसे आप एड्स रोगी, बलात्कारी या अपराधी घोषित कर रहे हैं। इसलिए सरकार का इन बातों पर गंभीरता से सोचना ज़रूरी है और संचार-माध्यमों को अपनी नैतिक ज़िम्मेवारी समझना आवश्यक है। जनता द्वारा जो विरोध प्रदर्शन होता है, तोड़-फोड़ होती है, इसके बजाय ऐसी फिल्में न देखने और साहित्य न खरीदने का संकल्प लेना चाहिए।

इतिहास को जानना ज़रूरी – एड्स के विषय में जब चर्चा की जाती है तब इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि जब एड्स अथवा कोई बीमारी नहीं थी तब सामाजिक परिस्थितियाँ कैसी थी? लोगों का आपसी व्यवहार कैसा था? उस समय मनोरंजन के क्या साधन थे? लोगों की मानसिक स्थिति कैसी थी? महिलाओं का समाज में क्या स्थान था? यदि इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर खोज लिया जाए तो न सिर्फ एड्स रोग का समाधान मिल जाएगा बल्कि समाज के हर वर्ग को नैतिक ज़िम्मेदारी निभाने का संदेश भी मिल जाएगा।

चरित्र या ब्रह्मचर्य के प्रति जन-जागृति ज़रूरी – सरकार द्वारा एड्स सप्ताह, एड्स जनजागृति... आदि नामों से अभियान चलाए जाते हैं लेकिन इस प्रकार के नामों से उल्टा असर होता है। उदाहरण के लिए, एक शिष्य अपने गुरु से मंत्र लेने गया, गुरु ने मंत्र देकर कहा – वत्स! जब यह मंत्र जाप करोगे उस समय बंदर को याद मत करना। अब वह शिष्य जब भी मंत्र जाप करता तो पहले उसे बंदर ही याद आता था क्योंकि बंदर का विशेष उल्लेख किया गया था। तो कहने का भाव यही है कि जो नहीं होना चाहिए उसकी चर्चा या वह शब्द बार-बार कहने की क्या जरूरत है? इसके बजाय चरित्र उत्थान, ब्रह्मचर्य, जनजागृति...ऐसे शब्दों का प्रयोग बार-बार किया जाए तो मनुष्य के मन में सकारात्मक चित्र अंकित होगा और वैसे ही विचार चलेंगे।

आत्म अभिमानी बनो – एड्स का रोग वास्तव में मन से शुरू होता है इसलिए सरकार भी कहती है, संयम रखो, संयम रखो। इंसान जब किसी के बाह्य रूप अर्थात् शारीरिक रूप को देखकर आकर्षित होता है तब मन में अशुद्ध विचारों का ज्वार-भाटा-सा उठ जाता है। अशुद्ध विचारों और स्वप्नों के कारण जो बार-बार शक्ति का ह्रास होता है उससे शारीरिक कमजोरी आती है जो बीमारियों से लड़ने की क्षमता कम

कर देती है। यदि सारे दिन में कुछ समय एकांत में स्वयं को शरीर से अलग शाश्वत, अविनाशी सितारा आत्मा निश्चय करें और जिसके प्रति लगाव हो रहा है उसका भी आत्मस्वरूप इमर्ज कर योगाभ्यास किया जाये तो निस्संदेह मन शांति की अवस्था में स्थिर होगा व अशुद्ध विचारों से मुक्त होगा जिससे शारीरिक शक्ति का ह्रास रुक कर शरीर सुदृढ़ होगा। गर्भ निरोधकों के इस्तेमाल से चरित्रहीनता बढ़ेगी, रक्षक ही भक्षक बन जायेगा, भारत विश्व भर में कलंकित होगा। कलियुग कलंकयुग में बदल जायेगा। सरकार द्वारा जो बच्चों को भी लैंगिग शिक्षण देने का प्रयास चल रहा है, लगता है इस प्रस्ताव पर किसी चरित्रवान ने गंभीरता से सोचा नहीं है। जिस प्रकार बाल मजदूरी कराना अपराध है, गाय को मांस खिलाना गलत है, उसी प्रकार बालक भी महात्मा के समान है। बालमन को अनावश्यक शिक्षण का बोझ नहीं देना चाहिये। अच्छे संस्कारों के अभाव में दिया गया इस प्रकार का शिक्षण अपराध के नए द्वार खोलेगा।

यदि यह शिक्षण देना ज़रूरी ही लगता है तो शिक्षकों को चाहिये कि पहले शरीर के प्रति बच्चों के दृष्टिकोण को बदलें। बच्चों को मोटरकार के प्रति विशेष आकर्षण होता है तो उन्हें चित्र दिखाकर बतायें कि जिस प्रकार मोटर और ड्राइवर हैं उसी प्रकार शरीर के अंदर आत्मा है। जिस प्रकार गाड़ी में मुख्य इंजन होता है जिस का वर्कशाप में ढ़ाँचा तैयार किया जाता है फिर वह ढ़ाँचा सुंदर दिखे, इसके लिए विभिन्न आकार और रंगों के कवर लगाए जाते हैं, इसी प्रकार मस्तिष्क रूपी इंजन के आस-पास एक हड्डी-मांस का ढ़ांचा है जिसे सुंदर बनाने के लिये चमड़े का कवर चढ़ाया गया है। जिस प्रकार गाड़ी में पैट्रोल डाला जाता है उसी प्रकार शरीर में भी मुख के द्वार से भोजन रूपी पैट्रोल दिया जाता है। शरीर का ड्राइवर आत्मा है जो न स्त्री है न पुरुष। उसी प्रकार हड्डी-माँस का ढ़ाँचा सबका लगभग समान ही है केवल बाहरी चमड़ी के कवर में अंतर है। गाड़ी में भी गंदा तेल आदि बाहर निकालने के निकासी द्वार बने होते हैं। इस प्रकार शरीर के प्रति दृष्टिकोण बदल कर बच्चों की दृष्टि आत्मिक बनाई जा सकती है।

श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान ज़रूरी – आत्मा अविनाशी है इसलिए कर्म का प्रभाव उसके साथ चलता है। जिस प्रकार दुर्घटना होने पर गाड़ी को नहीं बल्कि चालक को सजा मिलती है, उसी प्रकार, शरीर द्वारा आत्मा ही सजा भोगती है। यदि सजा अधूरी रह जाती है तो अगले शरीर (जन्म) में उसे सजा भुगतनी पड़ती है। इसलिए किन कर्मों से दु:ख मिलता है, किन कर्मों से सुख ? कर्म किसे कहते हैं ? कितने प्रकार के कर्म होते हैं ? इस प्रकार का शिक्षण बाकायदा उदाहरणों सहित अगर दिया जाये तो बच्चों का भविष्य निस्संदेह सुधर सकता है।

उपरोक्त बातों पर सरकार और चिंतकों को गंभीरता से विचार करना आवश्यक होता जा रहा है क्योंकि अभी भी कुछ सुनने की हिम्मत है और यदि इसी प्रकार गिरावट होती रहेगी तो मनुष्य की यह हिम्मत भी जाती रहेगी। तब हाथ मलने के सिवाय कुछ नहीं मिलेगा। ▲▲

ज्ञानामृत कार्यालय में पवित्रता तथा आत्मिक स्नेह की सूचक 'राखी' अनेक बहनों ने भेजी हैं। इस पावन स्नेह के प्रति सभी बहनों को पद्मगुणा स्नेह, दिल की दुआएँ और धन्यवाद ।

– सम्पादक

एक चुप सौ सुख

–ब्रह्माकुमार आत्मा भाई, बलिया (उ.प्र.)

मैं बर्फ बेचने वाला एक राजयोगी हूँ। मुझे ईश्वरीय ज्ञान में चलते लगभग बारह साल हो चुके हैं। लौकिक परिवार ने मेरा नाम परमात्मा रखा था। परंतु ईश्वरीय ज्ञान में आने के बाद इसे बदल दिया गया। अब मुझे सब आत्मा भाई के नाम से जानते हैं। लौकिक परिवार बड़ा साधारण व गरीब होने के कारण जीवन निर्वाह की हमेशा तंगी रहती थी। ईश्वरीय ज्ञान में आने से पहले प्रतिदिन काम करने के बाद ही भोजन नसीब होता था। मुझे भगवान से मिलने की बहुत लालसा रहती थी। मैं केवल पहली क्लास तक ही पढ़ा हूँ। परमात्मा का सही परिचय देने वाला मुझे बहुत खोजने पर भी नहीं मिला लेकिन भाग्य से मैं प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संपर्क में आया और मुझे मनचाही मुराद मिल गई। मुझे खुद का और खुदा का सच्चा परिचय मिल गया। प्यारे बाबा को बुद्धि रूपी नेत्र से पहचान लेने के बाद मैंने बर्फ बेचने का नया धंधा शुरू किया। बाबा की मदद से मुझे बहुत आमदनी हुई। चार महीने में सोलह बोरी गेहूँ मिला। उससे पहले एक किलो अनाज भी घर में नहीं होता था। हमारी जमीन का एक टुकड़ा जिस पर पचास वर्षों से हमें अधिकार प्राप्त नहीं था वो भी ज्ञान में आने के बाद हमें मिल गया। एक बार एक व्यक्ति मन में दुर्भाव रखकर रात दस बजे मुझे मारने के लिए आया तब मैं घर में खाना बना रहा था। उसने कहा – बाहर निकलो। मैंने अपने छोटे भाई से कहलवा भेजा कि मैं भोजन के बाद ही उस व्यक्ति से मिलूंगा। उसके बाद मैं प्यारे बाबा की याद में बैठ गया। वह निराश होकर लौट गया। इस प्रकार मेरी कुछ भी हानि नहीं हुई।

मौन का बल – एक बार मैंने प्यारे बाबा के महावाक्यों में सुना कि चुप रहना बहुत अच्छा है। मैंने सोचा, चुप रहना अच्छा तो है पर है बहुत मुश्किल लेकिन प्यारे बाबा की आज्ञा पर चलने का उत्साह दिल में भरा हुआ था तो एक दिन बहुत अभ्यास के बाद मैंने निश्चय किया कि आज मेरी बर्फ बिके या ना बिके पर मैं चुप रहूंगा। कमाल प्यारे बाबा की कि उस दिन सारी बर्फ बहुत जल्दी बिक गई। फिर मैंने सप्ताह में एक दिन मौन में रहना शुरू किया। लोगों पर इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। इसके बाद मैंने हर रोज मौन में रहना शुरू कर दिया और बर्फ बेचने के लिए इशारे मात्र से काम चलाने लगा। ग्राहक जब पूछते थे कि बर्फ कितने की है तो मैं अपनी एक उंगली दिखाकर बताता था कि एक रुपए की है और आधी उंगली दिखाकर बताता था कि दूसरी वाली पचास पैसे की है। मेरा ऐसा व्यवहार देख कई लोग मुझे गूंगा बर्फ वाला कहने लगे। कई लोग ऐसे भी कहते थे कि चलो उसके पास चलते है और बिना पैसे की बर्फ खाकर आते हैं।

धैर्य और सहनशीलता का मीठा फल – एक बार मैं एक नये गांव में गया। वहां एक आदमी रहता था जो बेचने वालों की चीजें छीनकर वा लूटकर लेता था, उस आदमी से मेरी भी भेंट हुई। वह सामान लेने आया, मैंने पैसे के लिए इशारा किया लेकिन वह पैसे तो देता नहीं था। मुझे कुछ लोगों ने उसके घर की तरफ जाने से मना भी किया था और चेतावनी भी दी थी कि वह तुमको लूट लेगा, आखिर वही हुआ। मैं तो मौन में था। उसने लगभग पचास रुपए की चीज़ें उठाई और चल दिया। मैं प्यारे बाबा की याद में खड़ा देखता रहा। सारे गांव में हल्ला मच गया कि गूंगे व्यक्ति का सारा सामान अमुक व्यक्ति ने लूट लिया परंतु गूंगा चुप रहा, अगर उसकी जगह कोई और होता तो लाठी चल जाती। **मैं बाबा की याद में सोच रहा था कि मुझे अपनी सहनशीलता और शुभभावना से लूटने वाले का हृदय परिवर्तन करना है।** मैंने एक बच्चे से उस व्यक्ति का नाम पूछा और अपनी डायरी में नोट कर लिया। बच्चे ने जाकर लूटने वाले व्यक्ति को कह दिया कि गूंगे ने आपका नाम अपनी डायरी में लिख लिया है। वह दौड़ा-दौड़ा मेरे पास आया और बोला – क्रोध में आकर मैंने गलती कर दी है। तब भी मैंने इशारे से उसको यही अहसास कराया कि कोई बात नहीं।

ईश्वरीय सेवा का सुनहरा अवसर – एक मास बाद मैं उसी गाँव में फिर गया और मैंने मौन तोड़कर सबको ईश्वरीय ज्ञान सुनाना शुरू कर दिया।

सभी बड़े स्नेह से सुनने लगे। तब एक ने मेरे से पूछा, उस दिन आपका इतना नुकसान हुआ फिर भी आप चुप क्यों रहे? तब मैने कहा, मुझे पक्का विश्वास था कि मैं उसका पिछले जन्म का कर्जदार था, अब मेरा वह कर्ज पूरा हो गया है, उसने आकर मेरे से माफी भी मांग ली है। इस प्रकार प्यारे बाबा की श्रीमत का दिल से पालन करने से मेरा धंधा भी निर्विघ्न हो गया और मैं लोगों के बीच सम्मान का पात्र भी बन गया। अब मैं गांव-गांव जाता हूँ, बर्फ बेचता हूँ, सब लोगों को ज्ञान सुनाता हूँ, लगभग 25 किलोमीटर साइकिल रोज चलाता हूँ। सुबह चार बजे से रात ग्यारह बजे तक इतना व्यस्त रहता हूँ कि किसी भी व्यर्थ संकल्प, बोल के लिए मेरे पास समय ही नहीं। मेरे मौन का प्रभाव बच्चों पर अच्छा पड़ता है, वे मेरे से इशारे से ही बर्फ मांगते हैं। यह देखकर मुझे बहुत खुशी होती है कि बच्चे कितने शांत और शीतल बन गए हैं। बच्चे अपने माता-पिता से जाकर कहते हैं कि यह बर्फ वाला जल्दी नहीं बोलता है। अगर बोलेगा तो भगवान की कथा सुनायेगा। फिर बच्चों के माता-पिता मुझे अपने द्वार पर बुला लेते हैं, इस प्रकार मुझे ईश्वरीय सेवा का अच्छा मौका मिलता है। गांव के लोग मुझे ऊँची नज़र से देखते हैं और मेरा बड़ा सम्मान करते हैं। मैं अपने जीवन से पूर्णतया संतुष्ट हूँ और हर पल प्यारे शिव बाबा का शुक्रिया करता हूँ। गरीब निवाज प्यारे बाबा ने मेरे जीवन को कितना सुखी और कितना महान बना दिया ! शुक्रिया बाबा, शुक्रिया, बार-बार शुक्रिया ! ☐☐

सतत् जागरूक बनिए

– ब्रह्माकुमार हरिशंकर जोशी, बोरीवली पूर्व, मुम्बई

एक राजा का राजकुमार जब वयस्क हुआ तो राजा ने उससे कहा कि तुम गद्दीनशीन होने से पहले अपने राज्य के प्रसिद्ध तलवारबाज़ से प्रशिक्षण लेकर आओ। लेकिन ध्यान रखना कि उस पहुँचे हुए गुरु के किसी कार्य में शंका नहीं उठाना। राजकुमार आश्रम में पहुँचा। गुरुजी ने उसे अपने अन्य शिष्यों के साथ आश्रम में लकड़ी काटना, सफाई करना, भोजन व्यवस्था करना आदि में लगा दिया। राजकुमार के मन में शंका उठी कि यहाँ न तो कोई तलवार दिख रही है, न कोई प्रशिक्षण परन्तु पिता की आज्ञानुसार उसने शंका को दबा दिया। छः मास गुजर गए। एक दिन गुरुजी लकड़ी लेकर राजकुमार के पास आए और कहा कि आज से मैं तुम्हें तलवारबाजी सिखाऊँगा पर मेरी एक शर्त है कि मैं दिन में किसी भी समय आकर आप पर इस लकड़ी से प्रहार करूँगा। यदि आप 'सावधान' शब्द का उच्चारण कर दोगे तो नहीं मारूँगा। इस अभ्यास में राजकुमार ने कई बार गुरु से मार खाई क्योंकि वह कभी बातों में और कभी काम में मशगूल होता था। पर धीरे-धीरे वह इतना सजग हो गया कि गुरुजी के मारने से पहले ही 'सावधान' शब्द बोलने लगा।

इसके बाद गुरुजी ने कहा कि जब तुम सो रहे होंगे तब भी मैं लकड़ी मारने आऊँगा। कुछ दिन तक सोए-सोए मार खाने के बाद राजकुमार नींद में भी इतना सजग रहने लगा कि गुरुजी के मारने से पहले ही 'सावधान' शब्द बोलने लगा। ऐसा करते-करते वह इतना कुशल और सतर्क हो गया कि किसी भी समय, कोई भी, किसी भी दिशा से वार करे तो वह आसानी से सामना कर सकता था। यह अवस्था आने पर गुरुजी ने उसके हाथ में तलवार देकर प्रशिक्षण प्रारम्भ किया और राजकुमार तलवारबाजी में बहुत पारंगत हो गया।

उपरोक्त कहानी में गुरु स्वयं परीक्षा बन कर बार-बार अपने शिष्य के सामने आता है और शिष्य प्रारम्भ में उस परीक्षा में असफल होता है क्योंकि जागरूक रहने का संस्कार दृढ़ हुआ नहीं है परन्तु धीरे-धीरे अभ्यास करते-करते यह संस्कार इतना दृढ़ हो जाता है कि परीक्षा बनने वाला गुरु ही उसकी प्रशंसा करने लगता है। आध्यात्मिक मार्ग में चलने वाले महावीरों पर भी माया कभी उनकी जागृत अवस्था में और कभी स्वप्न अवस्था में वार करती है परन्तु जब एक योगी माया के सभी रूपों को परख लेता है कि वह कब, कैसे, कितनी शक्ति से, कहाँ आ सकती है तो अपने को सुरक्षित कर लेता है। लेकिन यह होता है सतत् अभ्यास और गहन धारणा के बल से। क्योंकि कोई भी बात जब व्यक्ति के संस्कारों में स्थापित हो जाती है तो स्वभाव का अंग बन जाती है और उठते-बैठते तदनुरूप ही कार्य करने को बाध्य कर देती है। प्यारा बाबा कहता है कि ज्ञान का मनन करके उसे अपने संस्कारों में रमा लो तो हर परिस्थिति में, माया के किसी भी वार के समय, यह ज्ञान आपको विजयी बना देगा। ▲▲

1. भुन्तर (कुल्लू)- नवनिर्मित सद्भावना भवन के उद्घाटन अवसर पर उपस्थित हैं भ्राता रजिन्द्र ठाकुर, विपणन बोर्ड के अध्यक्ष भ्राता सत्यप्रकाश ठाकुर, ब्र.कु. कृष्णा बहन, ब्र.कु. किरण बहन तथा अन्य । 2. किरतोवाल (अमृतसर)- प्राध्यापक स्नेह-मिलन में उपस्थित हैं ब्र.कु. बीना बहन, ब्र.कु. सुमन बहन, ब्र.कु. प्रेम भाई तथा अन्य प्राध्यापकगण । 3. पदमपुर- आध्यात्मिक झाँकी का उद्घाटन करते हुए नगराध्यक्ष भ्राता विनोद शर्मा । साथ में ब्र.कु. वन्दना बहन तथा ब्र.कु. सुनीता बहन । 4. फाज़िलका- डी.सी. स्कूल में नैतिक मूल्य विषय पर बच्चों को सम्बोधित करती हुई ब्र.कु. प्रिया बहन । साथ में हैं प्राचार्या ऊषा अनीजा बहन, दैनिक जागरण के रिपोर्टर भ्राता अमरलाल जी, पंजाब केसरी के रिपोर्टर भ्राता कालड़ा जी, मुख्याध्यापक भ्राता अमर सिंह तथा ब्र.कु. सारिका बहन । 5. भीलवाड़ा- मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम में सम्बोधित करती हुई महिला विकास परियोजना की क्षेत्रीय निदेशिका बहन इन्दुबाला चोपड़ा । मंच पर विराजमान हैं ब्र.कु. इन्द्रा बहन तथा अन्य । 6. झींझक (उ.प्र.)- महाविद्यालय में शिक्षा में योग विषय पर प्रवचन करती हुई ब्र.कु. प्रीति बहन । मंच पर विराजमान हैं प्राधानाचार्य प्रो. भ्राता राजेश शर्मा तथा अन्य । 7. बिलाड़ा- मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए विकास अधिकारी भ्राता गुणाराम चौधरी, ठाकुर भ्राता दुर्गा सिंह जी, ब्र.कु. अरुणा बहन तथा अन्य । 8. कुरुक्षेत्र- उपायुक्त भ्राता टी.के. शर्मा को राखी बाँधती हुई ब्र.कु. राधा बहन । 9. कुल्लू- मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु. डॉ. सुभाष भाई, ज़िला परिषद अध्यक्षा बहन जावित्री ठाकुर तथा ब्र.कु. किरण बहन ।

1. लखनऊ (गोमती नगर)- आध्यात्मिक जीवन द्वारा मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए आई.जी. रजिस्ट्रार भ्राता सीताराम मीना, सचिव बैंकिंग भ्राता सदाकान्त तथा ब्र.कु. राधा बहन । **2. कानपुर (सिविल लाइंस)**- पीस पार्क में पौधारोपण करती हुईं कमिश्नर बहन अनीता भटनागर जैन । साथ में ब्र.कु. विद्या बहन तथा अन्य । **3. गोवर्धन (कोसीकलाँ)**- आध्यात्मिक चित्र प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए श्रीश्री1008 अनन्त विभूषित बाला जी महाराज । साथ में हैं ब्र.कु. संतोष बहन । **4. देहली (लाजपत नगर)**- सेवाकेन्द्र के नए भवन के शिलान्यास अवसर पर उपस्थित हैं विधायक भ्राता सुभाष मल्होत्रा जी, इस्कान के उपाध्यक्ष भ्राता वी.एन.दास जी, ब्र.कु. चन्द्र बहन, ब्र.कु. शुक्ला बहन तथा अन्य । **5. गोरखपुर**- महापौर बहन आशा देवी (किन्नर), ब्रह्माकुमारी मार्ग पट्टिका का अनावरण करती हुईं । साथ में हैं ब्र.कु. सुरेन्द्र बहन । **6. तारानगर**- मुन्सिफ मजिस्ट्रेट भ्राता सुरेश कुमार भट्ट को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. सुशीला बहन । **7. नई देहली (दसघरा टोटापुर)**- पूर्व सांसद भ्राता धर्मदास शास्त्री को आत्म-स्मृति का तिलक लगाती हुईं ब्र.कु. अलका बहन । **8. कठुआ**- वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक भ्राता जॉनी विलियम को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. वीना बहन । **9. आगरा (दयाल बाग)**- नए सेवा स्थान का उद्घाटन करती हुईं ब्र.कु.विमला बहन । **10. सिरसा (शान्ति सरोवर)**- सरपंच सम्मेलन में मंच पर विराजमान हैं एस.डी.एम. बहन गीता भारती, ब्र.कु. बिन्दु बहन तथा प्रो. भ्राता अशोक मण्डा जी । **11. लाडवा (कुरुक्षेत्र)**- विधायक भ्राता रमेश गुप्ता को राखी का महत्त्व समझाती हुईं ब्र.कु. राधा बहन । **12. लखनऊ (इन्दिरा नगर)**- पदमश्री महापौर डॉ. भ्राता एस.पी. राय का स्वागत करती हुईं ब्र.कु. अंजू बहन ।

1. **अम्बाला छावनी-** सम्पूर्ण स्वास्थ्य आध्यात्मिक मेले के उद्घाटन समारोह में दीप प्रज्वलित करते हुए भ्राता बृजमोहन जी, हरियाणा की स्वास्थ्य एवं समाज कल्याण मंत्री बहन करतार देवी जी, ब्र.कु. भारतभूषण जी, उपायुक्त भ्राता जे.पी. कौशिक जी तथा वरिष्ठ पत्रकार भ्राता सी.एल. पुरी जी । 2. **लहरा गागा (सुनाम)-** ब्र.कु. अलका बहन, बहन राजेन्द्र भट्टल, कृषि मंत्री पंजाब से ज्ञान-चर्चा करते हुए । 3. **भरतपुर (राज.)-** महाराजकुमार भ्राता विश्वेन्द्र सिंह, सांसद भरतपुर के जन्मदिवस पर ईश्वरीय सौगात देती हुई ब्र.कु. कविता बहन । 4. **होशियारपुर-** भ्राता प्रेमचन्द ढींगरा, यूनिवर्स बॉडी बिल्डर्स वर्ल्ड हैल्थ क्लब के इंचार्ज को ब्र.कु. राजकुमारी ईश्वरीय साहित्य भेंट करती हुई । 5. **चण्डीगढ़-** 'सशक्तिकरण के लिये मूल्यनिष्ठ शिक्षा' पर गोष्ठी में मंच पर उपस्थित हैं ब्र.कु. कविता, ब्र.कु. अमीरचन्द जी, भ्राता के.के. खण्डेलवाल विशेष सचिव शिक्षा विभाग हरियाणा तथा भ्राता कर्म सिंह जी प्राचार्य एम.एस. एस.एस. चण्डीगढ़ । 6. **पठानकोट-** ब्रिगेडियर पावा जी तथा आशा पावा सेवाकेन्द्र पर ब्र.कु. सत्या बहन, ब्र.कु. प्रताप भाई के साथ ज्ञान-चर्चा करते हुए । 7. **बाँसवाड़ा-** 'टीम स्प्रीट मैनेजमैण्ट' विषय पर बाँसवाड़ा सिनटेक्स मिल्स में सम्बोधित करती हुई ब्र.कु. पूनम बहन । अध्यक्ष भ्राता एस.एस. सजल, एच.आर..डी. प्रबन्धक भ्राता बृजेश जोशी तथा अन्य अधिकारी ध्यानपूर्वक सुनते हुए ।

1. **बरेली (आबला)**- मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम में सम्बोधित करती हुईं ब्र.कु. पार्वती बहन । मंच पर विराजमान हैं ब्र.कु. मनोरमा बहन तथा विधायक भ्राता धर्मपाल सिंह । 2. **बिलग्राम (कन्नौज)**- थानाध्यक्ष भ्राता निरहंकार सिंह को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. पूनम बहन । 3. **कासगंज**- मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम में सम्बोधित करती हुईं ब्र.कु.सरोज बहन । साथ में हैं एस.डी.एम. भ्राता अलीहसन करनी जी । 4. **फिल्लौर**- एस.डी.एम. भ्राता एस.एम.शर्मा तथा अन्य को ईश्वरीय संदेश देती हुईं ब्र.कु. तुलसी बहन । 5. **बदायूँ**- आध्यात्मिक साइकिल यात्रा का उद्घाटन करते हुए समाज सेवी भ्राता रामजस अनेजा तथा ब्र.कु. सरोज बहन । 6. **करनाल**- आध्यात्मिक कार्यक्रम में सम्बोधित करती हुईं अध्यक्षा बहन प्रकाश कौर । साथ में ब्र.कु. किरण बहन । 7. **नई दिल्ली (खानपुर)**- मूल्यनिष्ठ शिक्षा कार्यक्रम में पुरस्कार वितरण करते हुए ब्र.कु. आशा बहन तथा निगम पार्षद भ्राता प्रवीण बंसल । 8. **मलोट**- प्राचार्या बहन मक्कड़ जी को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. मंजू बहन । 9. **लोहियाँ खास**- भ्राता धर्मपाल जी लेक्चरर को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. शिवशक्ति बहन । 10. **रेवाड़ी**- जैन मन्दिर के ट्रस्टी भ्राता प्रमोद जैन को ईश्वरीय सौगात देती हुईं ब्र.कु. बृजेश बहन । 11. **कोटद्वार**- ईश्वरीय अनुभूति कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए व्यापारी भ्राता रमेश चौहान तथा ब्र.कु. सुमन बहन । 12. **श्रीगंगानगर**- ब्र.कु. विजय बहन को स्मृति-चिह्न प्रदान कर सम्मानित करते हुए श्री जगदम्बा युवा शक्ति मण्डल के अध्यक्ष भ्राता दर्शन सिंह जी ।

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रेस, शान्तिवन – 307510,
आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया । सह-सम्पादिका ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : bkatamad1@sancharnet.in **Ph. No. (02974)-228125** **theworldrenewal@yahoo.co.in**

1. दौसा (राज.)- गुजरात के महामहिम राज्यपाल भ्राता नवल किशोर शर्मा, श्रीश्री 108 जीवनदास जी महाराज, ब्र.कु. सुदेश बहन तथा ब्र.कु. शीतल बहन ज्ञान-चर्चा के बाद समूह चित्र में । **2. देहली (ओ.आर.सी.)**- सरपंच सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए भारत के विदेश राज्यमंत्री भ्राता राव इन्द्रजीत सिंह, ज़िला परिषद अध्यक्ष राव अभैसिंह जी, ब्र.कु. बृजमोहन भाई, ब्र.कु. आशा बहन, ब्र.कु. सरला बहन, ब्र.कु. शुक्ला बहन, ब्र.कु. गीता बहन तथा अन्य । **3. आबू पर्वत (ओमशान्ति भवन)**- 'श्रेष्ठता के लिए अन्तर्यात्रा' विषयक कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु. डॉ. गिरीश पटेल भाई, ब्र.कु. ओमप्रकाश भाई, ब्र.कु. मुन्नी बहन, ब्र.कु. रतन बहन, राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी, ब्र.कु. दिव्या प्रभा बहन, केन्द्रीय रेलवे के वरिष्ठ उप-महाप्रबन्धक भ्राता ए.के. उपाध्याय, ब्र.कु. गीता बहन, ब्र.कु. सुरेश भाई तथा केन्द्रीय रेलवे के डिप्टी सी.सी.ओ. भ्राता अजीत सक्सैना । **4. इन्दौर (ओमशान्ति भवन)**- देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के कुलपति भ्राता सी.एस. चड्डा को राखी बाँधती हुई ब्र.कु. शशि बहन तथा ब्र.कु. अनीता बहन । **5. कडप्पा**- आन्ध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री भ्राता वाई.एस. राजशेखर रेड्डी को राखी बाँधती हुई ब्र.कु. ईश्वरी बहन । **6. फतेहाबाद**- हरियाणा की स्वास्थ्य मंत्री बहन करतार देवी का स्वागत करती हुई ब्र.कु. मोहिनी बहन । साथ में ज़िला उपायुक्त भ्राता फतेह सिंह डागर तथा अन्य । **7. पूना**- फिल्म अभिनेता भ्राता अभिषेक बच्चन को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु. दीपक भाई । **8. अम्बाजी**- दांता में आध्यात्मिक जीवन द्वारा मूल्यनिष्ठ समाज की स्थापना कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए दांता के राजा भ्राता मधुसूदन सिंह जी, ब्र.कु. सुशीला बहन तथा ब्र.कु. दीपिका बहन ।

Regd.No. 10563/65,
Postal Regd. No. RJ/
WR/25/12/2003-2005,
Posted at Shantivan-
307510 (Abu Road) on
5-7th of the month.

नई देहली- काँग्रेस अध्यक्षा बहन सोनिया गाँधी को आत्म-स्मृति का तिलक देती हुईं ब्र.कु. मंजू बहन । साथ में हैं ब्र.कु. आशा बहन, ब्र.कु. बृजमोहन भाई तथा अन्य ।

कारगिल- आध्यात्मिक प्रवचन के बाद मेजर जनरल भ्राता वी.के. आलुवालिया तथा अन्य कर्नल, मेजर, कैप्टन के साथ ब्र.कु. भ्राता अशोक गाबा, ब्र.कु. कविता बहन तथा ब्र.कु. धर्मपाल भाई समूह चित्र में ।

आबू पर्वत (ज्ञान सरोवर)- व्यापार तथा उद्योग में सफलता के लिए आध्यात्मिक मूल्य विषयक राष्ट्रीय कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु. एम.एल. शर्मा, ब्र.कु. मोहन सिंघल, उड़ीसा विधानसभा के उपाध्यक्ष भ्राता प्रह्लाद जी, ब्र.कु. योगिनी बहन, राजयोगिनी दादी मनोहर इन्द्रा जी, भ्राता हरीश मेहता, डॉ. भ्राता बी.एन. रेड्डी तथा ब्र.कु. गीता बहन।